चन्दामामा
अगस्त १९८०

Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 13 (Hindi)

1st Prize: Miss Rosy. Ghazibad. *2nd Prize:* Archi Banerjee, Vasco-da-Gama. *3rd Prize:* K. Ashokkumari, Baroda-4. *Consolation Prizes:* Somesh Upreti, Jonhati. Sangeeta Behki, New Delhi. Ashok Kumar. New Delhi-24. Anita Malla, Jand K Tawi. Kalpana Khangan, Bilaspur.

श्रद्धांजलि

श्री बी. एल. एन. प्रसाद

जन्म : १२-११-१९३४ :: निधन : ३१-५-१९८०

हमारे चन्दामामा के व्यवस्थापक एवं संचालक श्री बी. नागि रेड्डी के ज्येष्ठ पुत्र हैं–जो अब हमारे बीच नहीं रहें। ३१ मई १९८० को उनका स्वर्गवास हुआ, उस वक़्त उनकी उम्र ४५ वर्ष की थी।

चन्दामामा के लिए वे न केवल मुद्रक थे, बल्कि उसके विकास और उन्नति में योगदान देनेवाले महान मेधावी भी थे। उनके निधन से हमारी जो क्षति हुई, उसकी पूर्ति असंभव है। प्रेम पूर्वक उनका स्मरण करते हुए, उनके स्मृतिचिह्न के रूप में उनके द्वारा स्थापित ऊँचे स्तर को बनाये रखने का हम यथा शक्ति प्रयत्न करेंगे!

प्रकाशक

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "भाई का हत्यारा" हमें यह बताती है कि मानव के प्रयत्न से जो फल प्राप्त होता है, वह केवल उसकी शक्ति पर आधारित नहीं होता, बल्कि परिस्थितियों पर भी आधारित होता है। क्योंकि व्यक्ति चाहे जैसे भी शक्तिशाली क्यों न हो, बालू से तेल नहीं निकाल सकता है न?

अमर वाणी

असज्जनेन संपर्कात् अनयं यांति साधव:
मधुरं शीतलं तोयं पावकं प्राप्य निर्गुणम् ।।

[उत्तम व्यक्ति भी दुष्टों के संपर्क में जाकर अनीति के शिकार हो जाते हैं। जैसे मीठा व ठण्डा पानी अग्नि के संपर्क से अपना वास्तविक गुण खो बैठता है न!]

वर्ष : ३२ | अगस्त १९८० | अंक : १२

एक प्रति : १-५० : : वार्षिक चन्दा : १८-००

टी. वासु, हैदराबाद

प्र. : अंतरिक्ष में (कृत्रिम) उपग्रहों को राकेटों के द्वारा भेज देते हैं न? क्या वे एक दूसरे से नहीं टकराते? उनमें मनुष्य होते हैं क्या? अपना कार्य संपन्न करने के बाद उनकी क्या स्थिति होती है?

उत्तर : कृत्रिम उपग्रह एक दूसरे से नहीं टकराते। क्योंकि यदि उपग्रह पृथ्वी की परिक्रमा करनेवाला हो तो उसकी परिधि पूर्णतया उसकी गति पर आधारित होती है। एक ही गति के साथ दो उपग्रहों का प्रयोग करने पर भी, अगर वे एक ही परिधि में परिभ्रमण करते हो, प्रयोग काल में जो अंतर होता है, वह परिधि के भीतर होता है। इसलिए उसकी गति में तेजी व मंदता नहीं होती।

यदि कृत्रिम उपग्रह पृथ्वी की परिक्रमा किये बिना और दूर चला जाएगा तो उसके लिए चन्द्रमा की परिक्रमा करने का मौक़ा मिल जाता है। ऐसे कृत्रिम उपग्रह बहुत ही कम होते हैं।

चन्द्रमा की चुंबक परिधि को पार करनेवाले राकेट, एक साथ सूर्य के चतुर्दिक की परिधि का प्रबंध कर लेते हैं; पर कोई भी यह नहीं बता सकते कि कालक्रम में उनकी गति क्या होगी?

वैज्ञानिक दो कृत्रिम उपग्रहों को जोड़ने का जो प्रयोग करते हैं, यह समाचार हम अखबारों में अकसर पढ़ते हैं। ऐसा करने के लिए पृथ्वी के चतुर्दिक की परिधि में आये हुए उपग्रह को पुन: राकेट के प्रयोगों द्वारा दूसरे उपग्रह की परिधि में लाना पड़ता है। यह कार्य संपन्न करने के लिए उपग्रह में मनुष्य होते हैं। इसी प्रकार चन्द्रमा में उतर कर पृथ्वी को लौटे अंतरिक्ष यानों में भी ज़रूरत के वक्त राकेटों का प्रयोग करने के लिए मनुष्य होते हैं।

"कार्य संपन्न" कृत्रिम उपग्रह में मनुष्य हो तो उन्हें निश्चय ही पृथ्वी को लौटना होगा। अन्यथा उन्हें अंतरिक्ष में छोड़ देते हैं। ऐसी हालत में वे सैकड़ों मील की ऊँचाई पर हों तो वायु के निरोध के कारण अपनी गति और ऊँचाई को खोकर वायु की निचली परतों में वायु के घर्षण से जलकर भस्म हो जाते हैं। पर साधारण परिमाणवाले ग्रह आसमान में ही छोटी-छोटी उल्काओं की भांति भस्म हो जाते हैं, अगर वे ग्रह बड़े हो तो उसके खण्ड स्काइलाब की भांति पृथ्वी पर गिर सकते हैं। उल्काओं के घर्षण के शिकार बने ग्रह भी अपनी गति खो बैठते हैं।

[८५]

परधर्मं भयावहं

पुण्य तीर्थ वाराणसी नगर में कर्पूरपटक नामक एक धोबी रहा करता था। वह एक दिन थककर गाढ़ निद्रा में पड़ गया। उसके अहाते में उसके गधा और कुत्ता बंधे पड़े थे। इतने में धोबी के घर के अहाते में एक चोर घुस आया।

चोर को देख गधा कुत्ते से बोला– "दोस्त, तुम भूंककर मालिक को नींद से जगा दो। वह तुम्हारा कर्तव्य है न?"

"तुम्हें मेरे कर्तव्य की याद दिलाने की कोई ज़रूरत नहीं है। तुम जानते हो, एक ज़माने में मैंने बड़े ही विश्वास के साथ अपने मालिक के घर और संपत्ति का पहरा दिया था। पर इधर कई दिनों से वह सुख और सुरक्षा में घमण्डी हो मेरा मूल्य भूल गया है। साथ ही मुझे भर पेट खाना भी नहीं खिला रहा है। जब तक वे खतरों के शिकार नहीं होते, तब तक अपने सेवकों की परवाह नहीं करते। आज चोर को थोड़ी संपत्ति लूट ले जाने दो। कल से मालिक मुझे खूब खाना खिलाएगा।" कुत्ते ने जवाब दिया।

"अबे, मेरी बात सुनो; अपने कर्तव्य का पालन करनेवाली स्थिति में जो व्यक्ति अपने स्वार्थ की बात सोचता है, क्या वह भी कोई नौकर या मित्र कहलाता है?" गधे ने कहा।

"सेवकों को भर पेट खाना खिलाये बिना ज़रूरत के वक़्त जो मीठी बात करता है, क्या वह भी कोई मालिक होता है?" कुत्ते ने पूछा।

ये बातें सुन गधा एक दम नाराज़ होकर बोला–"अरे पापी! मुसीबत के

वक़्त जो नौकर अपने मालिक का हित भूल जाता है, वह कैसा नीच होता है, जानते हो? अब और क्या किया जा सकता है? मैं ही यथा शक्ति कोशिश करके मालिक को नींद से जगा देता हूँ। बदन को गरम करने के लिए सूर्य को पीठ दिखाना है, अग्नि को चेहरा दिखाना होता है, मन लगाकर मालिक की सेवा करनी है। निर्मल हृदय से उत्तम लोकों की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना है।" यों कहकर गधा जोर-शोर से रेंकने लगा।

गधे की चिल्लाहट सुनकर चोर भाग गया। लेकिन अपनी नींद बिगाड़ने पर धोबी नाराज़ हो जाग उठा और उसने गधे को खूब पीटा।

हाथी को मारनेवाला सियार

ब्रह्मारण्य में कर्पूर तिलक नामक एक हाथी रहा करता था। उसे देख सियारों के झुंड ने सोचा—"अगर हम इसे मार सके तो हमें चार महीनों तक खाने की कोई कमी न रहेगी।"

इस पर एक बूढ़ा सियार बोला—"सुनो भाइयो, मैं अपने बुद्धि-बल से हाथी को मरवा डालूँगा।" फिर वह हाथी के पास गया, साष्टांग प्रणाम करके बोला—"प्रभू! मेरी प्रार्थना सुन लीजिए!"

हाथी ने पूछा—"तुम कौन हो? कहाँ से आते हो?"

बूढ़े सियार ने कहा—"मैं एक सियार हूँ! जंगल के सभी जानवरों ने मिलकर
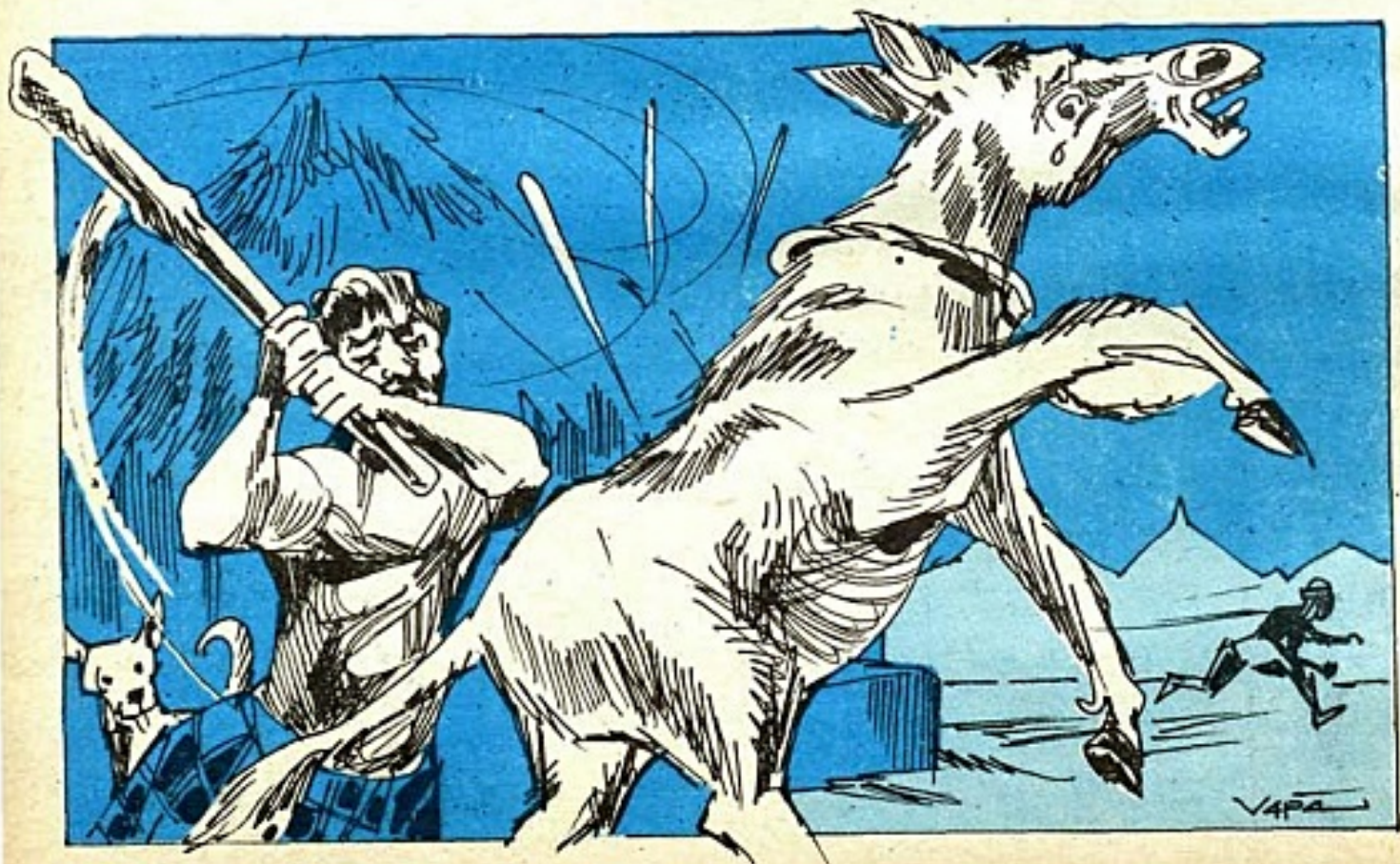
सभा बुलाई और मुझे अपने दूत के रूप में आप की सेवा में भेजा। सब ने आप से यह निवेदन करने को बताया–"बिना राजा के हमारा जीना कोई मतलब नहीं रखता। सभी प्रकार के लक्षणों से पूर्ण आप को हम अपने राजा के रूप में अभिषेक करना चाहते हैं। बड़े वंश में जन्म लेकर उदारता, सच्चरित्र, पवित्र तथा राजनीति का ज्ञाता ही राजा बनने योग्य है! प्रत्येक व्यक्ति को पहले अपने राजा को पाकर ही तब पत्नी और संपत्ति प्राप्त करने की कोशिश करनी होगी। राजा के बिना पत्नी और संपत्ति के होने से क्या फ़ायदा? कुछ ही क्षणों में चोर उन्हें हड़प लेंगे। राजा वर्षा की भांति प्राणदाता होते हैं। पानी के अभाव में भी प्राणों को बचा सकते हैं, लेकिन राजा के बिना मुमकिन नहीं है। जनता राजा के भय से ही अच्छा व्यवहार करती है। स्वभाव से पुण्यात्मा बहुत कम होते हैं। चाहे उनके प्रति बूढ़े, लूले-लंगड़े, रोगी या गरीब ही क्यों न हो, उनकी पत्नियाँ विश्वासपात्र बनी रहती हैं तो इसका कारण दण्ड का भय है। आप एक आदर्श राजा हैं। इसीलिए हम आप का राज्याभिषेक करने आये हैं। आप कृपया मुहूर्त का समय पूरा होने के पहले ही हमारे साथ चलिए।"

राजपद के लोभ में आकर कर्पूर तिलक सियार के पीछे चल पड़ा।

रास्ते में एक जगह दल-दल पड़ता था। वह ऊपर से देखने पर दलदल जैसा नहीं लगता था। सियार दल-दल के किनारे स्थित कड़ी जमीन पर चलते आगे बढ़ा। पर हाथी दल-दल में फंसकर बोला– "दोस्त सियार! अब मैं क्या करूँ? मैं इस दल-दल में फंसकर भयंकर मौत का शिकार होने जा रहा हूँ। एक बार मुड़कर मेरी हालत देख लो।"

सियार ने मुड़कर देखा, विकट हँसी हँसते बोला–"मेरी पूंछ पकड़कर ऊपर आ जाओ। मुझ जैसे प्राणी पर मूर्खतावश तुमने विश्वास किया, इसलिए तुम्हें इस विपदा से कोई बचा नहीं सकता। बुजुर्गों ने बताया है कि सज्जनों के साथ मैत्री करनेवाले सुधर जाते हैं और दुर्जनों के साथ दोस्ती करनेवाले नष्ट हो जाते हैं।"

इसके बाद हाथी उस दल-दल में मर गया। उसका भारी शरीर सियारों के लिए कई दिन तक आहार बना रहा।

कार्य संपन्न सेवक

अरावली पहाड़ों में एक चोटी पर महाविक्रम नामक एक सिंह रहा करता था। उसके सोते वक़्त एक छछुंदर आकर सिंह पर सवार हो जाता और उसका अयाल काट देता। सिंह खीझ उठता, मगर छछुंदर बड़ी युक्ति के साथ सिंह से बचकर भाग जाता।

सिंह की समझ में न आया कि छछुंदर का पिंड कैसे छुडा ले! पर उसका जानी दुश्मन बिल्ली है, इसलिए सिंह बिल्ली को आश्रय देकर उसे खूब मांस खिलाता रहा।

बिल्ली को देखने के बाद छछुंदर अपने बिल से बाहर न निकला। वह भूख के मारे तड़पने लगा। इस तरह बहुत दिन तक काम चल नहीं सकता था, आखिर एक दिन वह हिम्मत करके बाहर आया, तब स्वामि भक्त बिल्ली ने छछुंदर को पकड़कर मार डाला। बस, इसके बाद सिंह को बिल्ली से कोई काम न था, इस कारण उसे मांस खिलाना बंद किया।

[३]

[कुंडलिनी देश की सेनाओं से भरे जहाज भयंकर तूफान में फंस गये और समुद्र में तितर-बितर हो गये। सेनापति समरसेन ने सभी जहाजों को एक स्थान पर इकट्ठा करवाया, तब छोटी नावों में कुछ सैनिकों के साथ एक डरावने द्वीप में पहुँचा। वहाँ पर कुछ विचित्र जानवरों की लड़ाई देख वे घबरा गये और पेड़ों पर जा बैठे। इसके बाद...]

समरसेन और उसके सैनिक पेड़ों की डालों में छिपे रहकर उन विचित्र जानवरों की लड़ाई बड़ी उत्सुकतापूर्वक देखने लगे। सिंहों का शिकार बना एक हाथी उनसे बचने के लिए तरह-तरह की यातनाएँ झेलने लगा।

समरसेन के साथ पेड़ों की डालों में छिपे सैनिकों में से एक बोला—"सेनापतिजी, हम बड़ी मुसीबत में फंस गये हैं! इस डरावने द्वीप से लूटकर ले जानेवाली संपत्ति ही क्या है?"

इसके जवाब में दूसरा सैनिक बोला—"तुम संपत्ति की बात करते हो? अगर हम प्राणों के साथ बचकर यहां से भाग निकले तो वही हमारे लिए सब से बड़ी संपत्ति हो सकती है।"

इस पर समरसेन गहरी चिंता में डूब गया। जहां दुनिया के सारे लोग सभ्य

बनकर आज सुख की ज़िंदगी बिता रहे हैं, वहाँ बेचारे इस द्वीप के निवासी अभी तक शिलायुग की दशा में पड़े हुए हैं। ऐसी कोई सूचना दिखाई नहीं देती कि यहाँ पर कोई राजा और शासन भी हो! ऐसे इस द्वीप में धन-संपत्ति कहाँ से मिल सकती है? इसकी कल्पना तक करना हमारी मूर्खता तो न होगी?

समरसेन यों विचार कर ही रहा था कि सारे जंगल को गुंजा देनेवाला भयंकर कंठ स्वर सुनाई दिया—"अरे काल भुजंग! हे कंकाळ, आओ, आ जाओ! तुम लोग यथा शीघ्र उस चतुर्नेत्र को पकड़कर उसका वध कर डालो।"

ये शब्द सुनने पर समरसेन को लगा, मानो उसके हृदय की गति बंद हो गई है। उसके साथ ही डालों में छिपे समरसेन के सैनिक आपाद मस्तक कांप उठे। उस कंठ ध्वनि को सुन नीचे तालाब के समीप में रहनेवाले जानवर और पेड़ों पर बैठे नर वानर तितर-बितर हो भाग खड़े हुए।

देखते-देखते उस तालाब की मेंड़ पर एक भयंकर आकृतिवाला प्राणी आ धमका। वह एक छोटे परिमाण के ताड़ के बराबर है। उसके सिर्फ़ एक आँख की दृष्टि है। उसके दोनों पैरों से लिपटकर

दाढ़े बढ़ाकर भयंकर लगनेवाला एक काल सर्प है। उसके पीछे की ओर उसके सर के ऊपर हिलनेवाला एक मनुष्य का कपाल है।

वह भयंकर रूपधारी तालाब की मेंड पर खड़े हो चारों तरफ़ नज़र दौड़ाकर सर हिलाते हुंकार कर उठा—"हे! जादू का द्वीप! मदार का टीला, गोखरू पहाड़! पहाड़ के छोर पर चट्टान! हे कंकाळ! उस चट्टान पर खड़े हो देखने से क्या दिखाई देगा?"

इसके उत्तर में मानव का वह कपाल विकट अट्टहास करते बोला—"समुद्र के बीच में नाचनेवाली एक नाव! नाव के अन्दर असंख्य धन राशियाँ! नाव के बाहर पहरा देनेवाली एक नागकन्या! उफ़! उस नाग कन्या के वध करने पर, बस! नाव में भरी हुई सारी धन-राशियाँ हमारी हो जाएँगी।"

"हाँ, हाँ, इतना अगर हम साध सकते हैं, तो बस, वह सारा धन हमारा ही हो जाएगा। मगर देखो, वह चतुर्नेत्र... हूँ!" यों कहते वह काना व्यक्ति पुनः हूँकार कर उठा।

पेड़ की डालों में बैठे यह वार्तालाप सुननेवाले समरसेन को एक ओर भय और दूसरी ओर आश्चर्य लगने लगा। उसने

समझ लिया कि वह इस वक़्त मांत्रिक द्वीप में है, उस द्वीप के किसी पहाड़ के छोर पर स्थित चट्टान पर खड़े हो देखने से समुद्र के बीच धन-राशियों से पूर्ण नाव दिखाई देगी।

लेकिन यह चतुर्नेत्र कौन है? इस भयंकर आकृतिवाले काना मांत्रिक और उस चतुर्नेत्र के बीच दुश्मनी क्यों पैदा हो गई है? इस दुश्मनी का कारण नाव की धन-राशियाँ तो नहीं हैं? या कोई दूसरा कारण भी है?

समरसेन यों विचार कर ही रहा था कि मांत्रिक तालाब की मेंड पर से उतरकर जंगल के अन्दर चला गया। उसके पीछे

काल सर्प और मानव का कंकाळ भी चल पड़े।

अब तक पेड़ पर थर-थर कांपनेवाले सैनिक उस एकाक्षी मांत्रिक के जाते ही थोड़ा आश्वस्त हुए। तब सब ने समरसेन की ओर नज़र दौड़ाई। पर अभी तक सब के चेहरों पर भय के चिह्न साफ़ दिखाई दे रहे थे।

पर सैनिकों में से एक हकलाते हुए बोला–"यह एकाक्षी एक बड़े मांत्रिक जैसा लगता है। उसका अनुसरण करनेवाले काल सर्प और मानव का कपाल देखने पर बड़े बड़े साहसियों की हिम्मत भी टूट जाती है। ऐसे द्वीप को हम जितनी जल्दी छोड़कर चले जाये, तो उतना ही अच्छा होगा।"

सारे सैनिक अपने कान खड़े करके कुतूहल के साथ निश्शब्द बैठे रहे कि इस सवाल का जवाब उनके सेनापति के मुंह से क्या निकलनेवाला है। समरसेन थोड़ी देर तक मौन बैठा रहा, फिर संतुष्टिपूर्वक सर हिलाते हुए बोला–"ऐसे भयंकर द्वीप में भी हमें धन के प्राप्त होने के आसरे दिखाई दे रहे हैं! पर इन कष्टों को सहने की शक्ति और सब्रता की हमें ज़रूरत है।"

इसके बाद समरसेन सैनिकों के जवाब की प्रतीक्षा किये बिना चुपचाप पेड़ पर से नीचे उतरा, मगर प्रत्येक सैनिक के मन को यह सवाल विकल बनाने लगा कि आगे क्या होनेवाला है? चाहे कुछ भी हो, इसका निर्णय करनेवाला व्यक्ति समरसेन था, इसलिए सब लोग उसकी ओर ताकने लगे।

समरसेन सारे सैनिकों के चेहरों की ओर एक बार परखकर देखते हुए बोला–"तुम लोगों ने सुना है न?... गोखरू पहाड़, पहाड़ के छोर पर चट्टान! और एकाक्षी मांत्रिक की बातें भी? अगर हम उस पहाड़ को और उसके छोर पर स्थित चट्टान को भी ढूंढ़कर पता लगा

सकेंगे तो समझ लो, हमारा यहाँ पर आना सार्थक है।"

ये बातें सुन एक सैनिक ने शंका प्रकट करते हुए पूछा—"क्या आप विश्वास करते हैं कि इस एकाक्षी मांत्रिक की बातों में सचाई है?"

समरसेन पल भर रुककर बोला—"मांत्रिक के प्रश्न तथा मानव-कपाल के उत्तर में झूठ की कोई गुंजाइश नहीं है। परंतु उनके वार्तालाप से विदित होता है कि धन से पूर्ण नाव का पहरा एक नाग कन्या दे रही है। इसके साथ हम यह भी विश्वास कर सकते हैं कि चतुर्नेत्र नामक एक मांत्रिक उनका प्रबल शत्रु है। लेकिन अब हमारे सामने सब से बड़ा सवाल यह है कि इतने सारे विघ्नों से बचकर धन से पूर्ण उस नाव पर हम क़ब्ज़ा कैसे कर सकते हैं?"

सैनिकों को भी यह एक विकट समस्या मालूम हुई। अपने सेनापति को इस संबंध में सलाह देने की हिम्मत उनमें से एक की भी न हुई। तूफान के आघातों से घबराये सैनिक अब समरसेन की बातें सुन और डर गये।

समरसेन ने एक बार चतुर्दिक दृष्टि डाली, तब चुपचाप चलने लगा। सैनिकों ने उसका अनुकरण किया। वे लोग यों

इस शंका के होते ही वे लोग और भयभीत हो उठे।

इस बीच समरसेन तथा उसके सैनिकों को भी विस्मय में डालनेवाला एक विचित्र दृश्य दिखाई दिया। वह एक नर वानर था। उसमें मानव और वानर के लक्षण समान रूप से विद्यमान थे। वह एक पेड़ पर से धम्म से कूद पड़ा। अब तक हवा में उड़ते हुए सिर्फ़ चेतावनी देनेवाला वह काला उल्लू उस नर वानर के कंधों पर आ बैठा और उसके कान में गुप्त रूप से कुछ कहा।

दूसरे क्षण नर वानर समरसेन और उसके सैनिकों की ओर एक बार देखकर पेड़ों पर से लटकनेवाली बेलों की मदद लेकर एक पेड़ पर से दूसरे पेड़ पर कूदते पल भर में गायब हो गया।

सैनिकों में से एक व्यक्ति नर वानर की दिशा में देखते बोला–"सेनापतिजी, अब हमारा यहाँ से शीघ्र लौट जाना ज्यादा उचित होगा। इस भयंकर मांत्रिक द्वीप में रहकर अब हम लोग कुछ भी साध नहीं सकते। पक्षी और जानवरों को अपने भेदियों के रूप में इस्तेमाल कर सकनेवाले मांत्रिकों की शक्ति के आगे हमारे बाण और तलवार तिनकों के बराबर सिद्ध होंगे।"

पेड़ों के नीचे से चलते थोड़ी ही दूर आगे बढ़े थे कि कान के पर्दों को चीरनेवाली भीषण पुकार उन्हें सुनाई दी।

समरसेन ने विस्मय में आकर उस ध्वनि की दिशा में देखा, तब काले वर्ण का एक उल्लू उनके सरों पर उड़ते मानव के स्वर में चेतावनी देने लगा–"हे चतुर्नेत्र! चतुर्नेत्र! नर मानव! तुच्छ मानव! खबरदार!"

उस काले उल्लू तथा डरावने उसके कंठ स्वर को सुनकर समरसेन और उसके सैनिक अचरज में आ गये। जो मांत्रिक पक्षियों के द्वारा मानव की भाषा बोलवा सकता है, वह कैसा शक्तिशाली होगा!

समरसेन ने सैनिक की बातों पर विशेष कोई ध्यान न दिया। काला उल्लू समीप के एक पेड़ की डाल पर बैठे अंगारों जैसी अपनी पुतलियों को इधर-उधर घुमाते उन पर इस तरह निगरानी रखने लगा मानो वह उनका पहरा दे रहा हो।

समरसेन ने काले उल्लू की ओर पल-दो पल परखकर देखा, तब इस तरह सर हिलाया, मानो उसे कोई उपाय सूझ पड़ा हो, तब बगल में खड़े सैनिक के हाथों से तीर-कमान लेकर उस काले उल्लू की ओर निशाना साधा।

दूसरे ही क्षण एक सैनिक घबराकर ऊँची आवाज़ में चिल्ला उठा–"सेनापतिजी, मंत्र-शक्तियाँ रखनेवाले उस उल्लू पर शायद हमारे बाण काम न कर पाये! आप सोचिये, उल्टे हम उसके मालिक मांत्रिक को नाराज़ करनेवाले सिद्ध हो सकते हैं।"

ये बातें सुनकर भी समरसेन विचलित न हुआ, बोला–"इसी बात का हम फ़ैसला करेंगे।" यों कहकर उल्लू पर तीर चलाया। तीर सर्र से जाकर उल्लू से जा लगा। समरसेन ने सोचा कि बाण के लगते ही उल्लू छटपटाकर दम तोड़ देगा। मगर समरसेन की आशा निराशा में बदल गई।
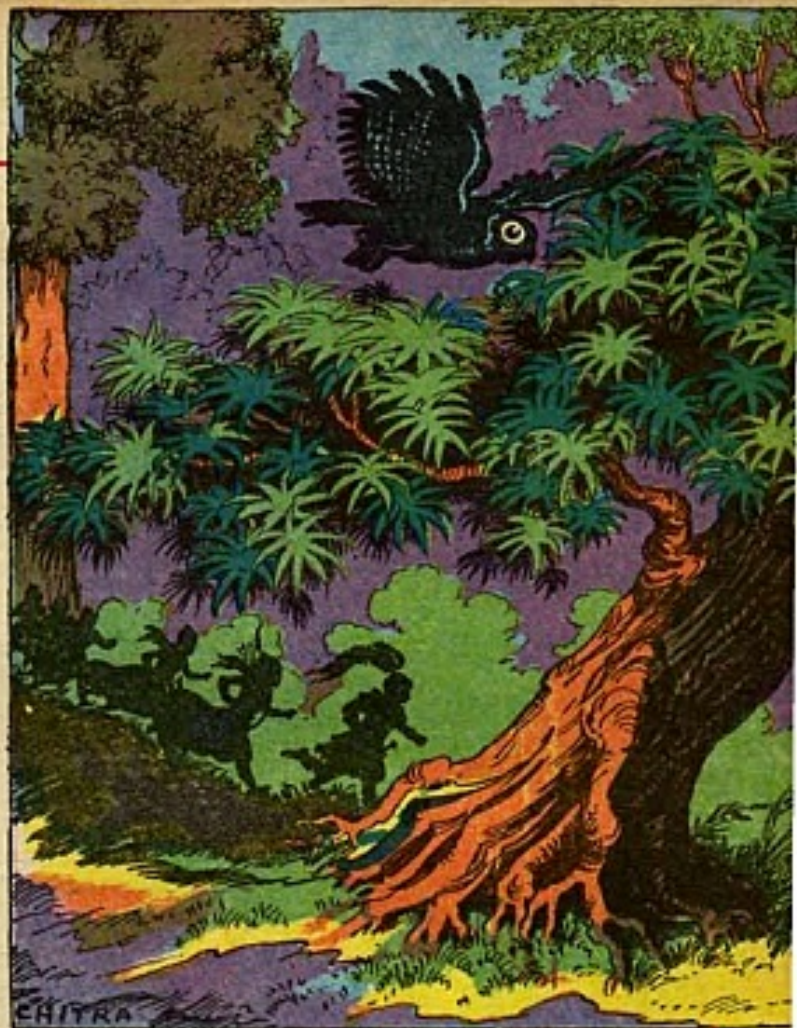
काला उल्लू अपने पंखों में चुभे बाण को अपनी चोंच से आसानी से निकाल पाया, उसे दूर फेंककर कठोर ध्वनि के साथ चिल्ला उठा–"अरे दुष्ट मानवो, तुम लोग सोचते हो कि मुझे मार सकते हो? अपने को बड़ा शक्तिशाली माननेवाला वह एकाक्षी मांत्रिक भी मेरा कुछ बिगाड़ न पाया। ऐसी हालत में तुम लोग किस खेत की मूली हो? थोड़ा रुक जाओ और देखते रहो! हमारे चतुर्नेत्र आकर तुम्हारे खून पी जाने का वक़्त निकट आ गया है।"

ये बातें सुनने पर समरसेन ने भली भांति समझ लिया कि वह तथा उसके सैनिक किस प्रकार की विपदा में फंसने

जा रहे हैं। वह सैनिकों को सचेत कर वहाँ से तेजी के साथ दौड़ने लगा, सैनिकों ने भी उसका अनुसरण किया। किंतु काला उल्लू उनका पीछा करते ऊपर उड़ते हुए चिल्लाने लगा।

समरसेन यह सोच ही रहा था कि जल्द ही समुद्र तट पर पहुँचकर जहाज पर सवार हो उस भयंकर द्वीप को छोड़ कर चले जायें! मगर उल्लू की चिल्लाहटें सुनते मांत्रिक के उधर आ धमकने की आशंका से डर के मारे वे लोग रास्ता भटकर जंगल में दूर तक चले गये। फिर उन्हें एक जगह आश्वस्त हो खड़े होकर सोचने का मौक़ा दिये बिना काला उल्लू समरसेन और उसके सैनिकों का बराबर पीछा करते कर्ण कठोर रूप में चिल्लाने लगा।

समरसेन ने अपने अनुचरों को समझाया– "हम लोग रास्ता भटक गये हैं। साथ ही इस टापू के किसी मांत्रिक के शत्रु बन गये हैं। इस हालत में कुंडलिनी देवी को छोड़ कोई भी हमारी रक्षा नहीं कर सकते।"

तब एक सैनिक ने सुझाया–"सेनापतिजी, हमें किसी भी तरह से सही उल्लू की नज़र से अपने को बचा लेना हर हालत में हमारा हितकर होगा। आप कृपया कोई ऐसा उपाय कीजिएगा।"

समरसेन इसका जवाब देने ही जा रहा था, तब जंगल को गुंजा देनेवाली एक भयंकर कंठ ध्वनि सुनाई दी–"हे काल भुजंग! हे कंकाळ!"

उस ध्वनि को सुनते ही चतुर्नेत्र का भेदिया काला उल्लू पेड़ों पर से उड़ते कहीं चला गया।

समरसेन और उसके सैनिक यह सोचकर खुश हो रहे थे कि कम से कम मांत्रिक के उल्लू से अब उनका पिंड छूट गया है, तभी दूसरी दिशा से एकाक्षी मांत्रिक की भयंकर कंठ ध्वनि ने उन्हें भयकंपित बनाया। वे लोग वहाँ से तेजी के साथ अंधाधुंध भाग खड़े हुए। (और है)

भाई का हत्यारा

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मानव जीवन स्वार्थ से भरा हुआ है। प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थ की वजह से ही प्रेरणा पाता है। मगर स्वार्थ की प्रेरणा देनेवाली सब से ज्यादा पाप पूर्ण वस्तुएँ हैं–राज्य और रमणी। इन दोनों को पाने के वास्ते मनुष्य भयंकर से भयंकर कार्य करने को भी तैयार हो जाता है। इसके उदाहरण स्वरूप में आप को चन्द्रसेन नामक व्यक्ति की दुष्टता का परिचय देता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा: अमरसेन यौवनावस्था में ही अमरावती का राजा बना। चिरकाल से कल्लिकोट और

वेताल कथाएँ

अमरावती के बीच दुश्मनी चली आ रही थी। अमरसेन के पिता के जमाने में कल्लिकोट का राजा अमरावती की ओर आँख उठाकर देख न पाया, लेकिन अमरसेन को राज्य शासन में कच्चा मानकर कल्लिकोट के राजा काटम ने अमरावती पर हमला किया और अमरसेन के हाथों में हार गया।

इसके थोड़े दिन बाद काटम राजा की पुत्री मणिमाला के स्वयंवर का इंतजाम हुआ। मणिमाला अनुपम सुंदरी के रूप में मशहूर थी। उसके स्वयंवर के लिए राजा काटम ने सभी राजाओं के पास निमंत्रण भेजे, लेकिन अमरसेन के पास नहीं भेजा। यह बात अमरसेन को अपमानजनक लगी। उसने इस संबंध में अपने मंत्री से परामर्श किया।

मंत्री ने समझाया—"महाराज, काटम राजा हमारे लिए प्रबल शत्रु हैं। इसलिए अगर उन्होंने हमें निमंत्रण नहीं भेजा तो हमें चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। यदि वे हमारे पास निमंत्रण भेजते, तब भी हमें उस स्वयंवर में भाग लेना नहीं चाहिए। क्योंकि शत्रु राजा निमंत्रण भेजकर भी हमारे प्राण ले सकते हैं।"

मंत्री की यह सलाह अमरसेन को अच्छी न लगी, उसने दूतों के द्वारा काटम राजा के पास अपना चित्र भेजा।

राजा काटम ने उस चित्र को देखते ही जमीन पर पटक दिया, उस पर जूता मारकर दूत के हाथ वापस कर दिया।

अमरसेन को यह समाचार मिलते ही उसने काटम राजा पर लड़ाई घोषित कर दी।

यह खबर मिलते ही काटम राजा ने घोषणा की कि जो व्यक्ति अमरसेन का सर काटकर लाएगा, उसके साथ उसकी पुत्री का विवाह करेगा।

यह घोषणा सुनते ही मणिमाला के साथ विवाह करने की इच्छा रखनेवाले सभी राजकुमार एक साथ अपनी सेनाओं को लेकर अमरावती पर हमला कर बैठे।

उन दिनों में अमरसेन का छोटा भाई चन्द्रसेन गुरुकुल में विद्याभ्यास कर रहा था। उसने जब अपने बड़े भाई पर होनेवाले खतरे का समाचार सुना, तब वह उसी वक़्त घर लौट आया। कई राजकुमारों द्वारा अपनी सेनाओं के साथ अमरावती पर हमला करने के समाचार चन्द्रसेन को मिलने लगे। चन्द्रसेन ने क़िले के बुर्ज पर चढ़कर देखा, चारों तरफ़ से सेनाएँ अमरावती की ओर बढ़ रही हैं। उन्हें देख अमरसेन घबरा गया।

चन्द्रसेन ने हठात् अपनी तलवार खींच ली, अपने समीप खड़े अमरसेन का सर काटकर उसका धड़ क़िले के नीचे फेंक दिया। उस धड़ को अमरावती पर हमला करनेवाले सभी राजकुमारों ने देखा, तब सोचा कि किसी ने पहले ही अमरसेन का सर काट डाला है, अब उन्हें मणिमाला के साथ विवाह करने का मौक़ा नहीं है, तब वे निराश हो वापस लौट गये।

इसके बाद चन्द्रसेन ने अपने बड़े भाई का सर ले जाकर राजा काटम को दिखाया। मणिमाला के साथ विवाह करके मित्रता कर ली।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजन, चन्द्रसेन के द्वारा अकारण ही अपने बड़े भाई की हत्या करने का उद्देश्य ही क्या है? मणिमाला जैसी सुंदरी के साथ विवाह करने का है? या अपने बड़े भाई की हत्या कर वह राजा बनना चाहता था? राजा काटम ने चन्द्रसेन को अपने प्रबल शत्रु अमरसेन का छोटा भाई जानकर भी उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह क्यों किया? इन संदेहों का समाधान जानकर भी न देंगे तो आप का सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"
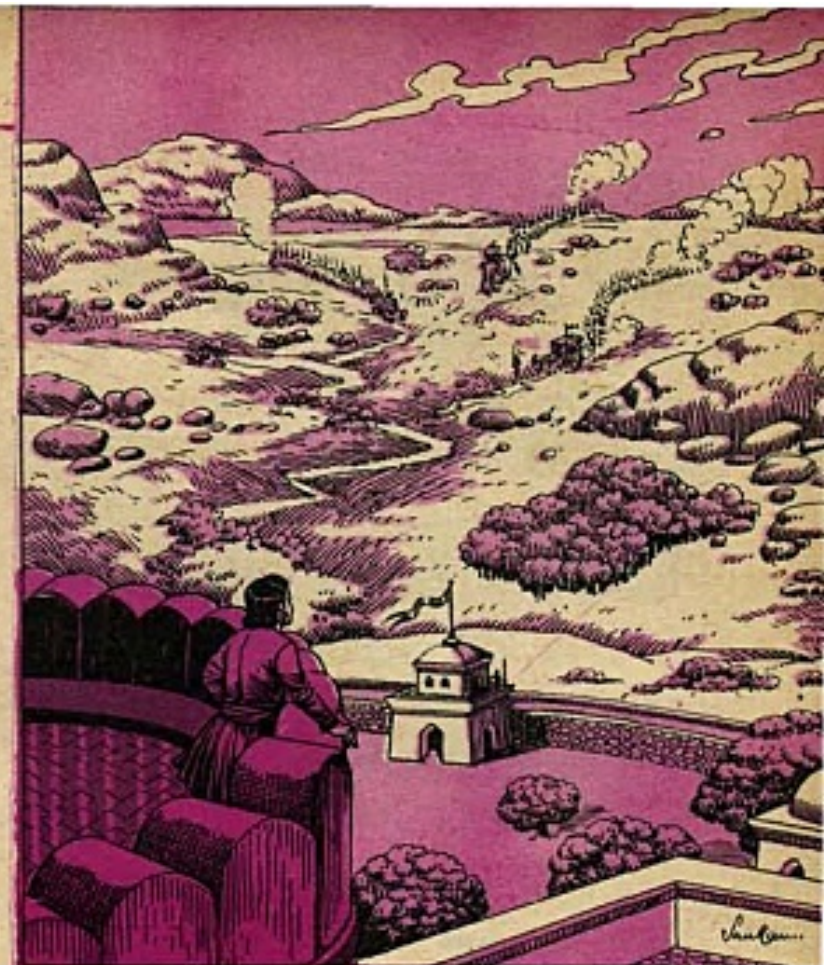
विक्रमार्क ने इसका समाधान यों दिया: "क्रोधावेश में आकर अमरसेन ने काटम राजा पर युद्ध की घोषणा की और अपनी मौत का निमंत्रण किया। उसे तो अपने मंत्री की सलाह का पालन करना चाहिए

था। अमरसेन ने सिर्फ़ यही सोचा था कि राजा काटम उससे कहीं कमजोर है, लेकिन यह नहीं विचार किया कि मणिमाला की वजह से कई राजा काटम राजा के पक्ष में हो जायेंगे। अमरसेन इतने सारे राजाओं के साथ लड़कर उन्हें हराने की स्थिति में न था। इस कारण उसकी मौत किसी भी हालत में निश्चित है। यह बात भांपकर चन्द्रसेन ने सोचा कि उसके बड़े भाई की हत्या अन्य राजाओं के द्वारा करने के बदले उसके द्वारा करने पर सब तरह से लाभदायक सिद्ध होगा। इससे जहाँ राज्य की रक्षा होती है, वहाँ काटम राजा के साथ शत्रुता भी दूर होगी। राजा काटम निर्बल होकर भी अमरसेन के राज्य पर हमला करके युद्ध में हार गया था, ऐसी हालत में अगर वह काटम का दामाद बने तो वह शांत हो जाएगा। ऐसा न होकर अगर कोई और राजकुमार काटम का दामाद बन जाता तो उसकी मदद से वह बराबर अमरावती पर हमला करता ही रहेगा। इन कारणों से चन्द्रसेन का निर्णय सभी प्रकार से समुचित ही है। अब काटम राजा के द्वारा अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने में किसी प्रकार से कोई नुक़सान न होगा। यदि वह अपनी पुत्री का विवाह चन्द्रसेन के साथ न करके फिर से स्वयंवर का आयोजन करता तो सभी राजाओं के बीच उसके वचन का कोई मूल्य नहीं होता। वे सभी राजकुमार इसी विश्वास के साथ अमरसेन पर हमला कर बैठे कि अमरसेन का सर काटकर लानेवाले के साथ राजा काटम अवश्य अपनी पुत्री का विवाह करेगा। इसके अतिरिक्त कोई भी राजा अमरसेन के साथ शत्रुता नहीं रखता था। इसलिए काटम राजा का निर्णय भी विवेकपूर्ण कहा जा सकता है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
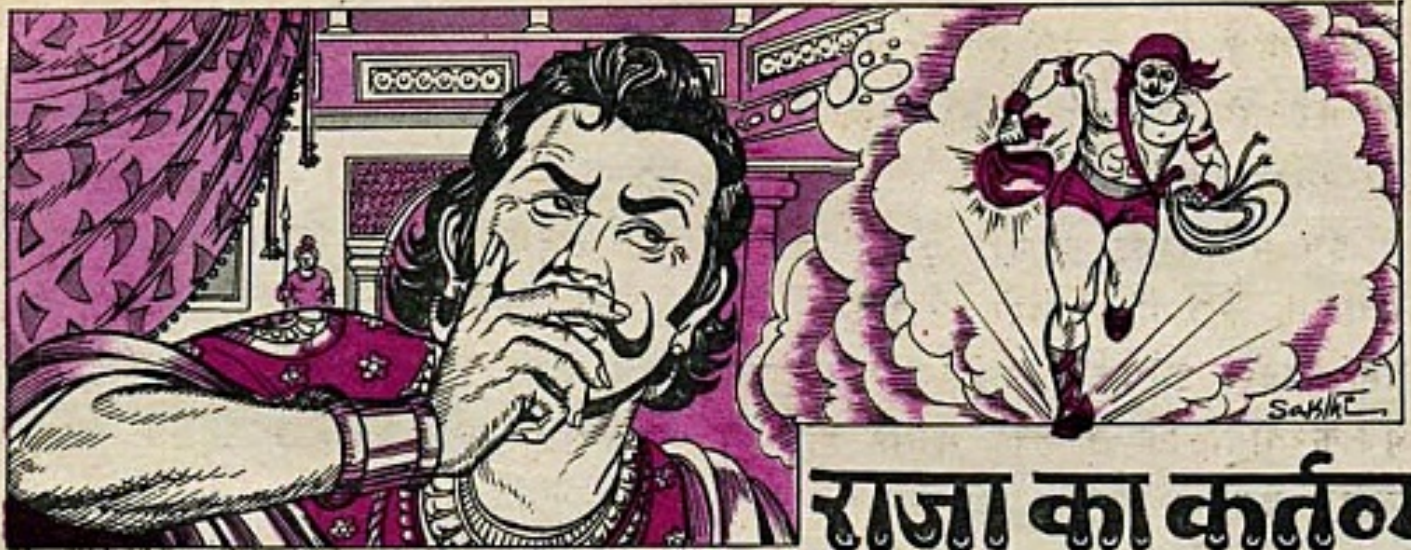
राजा का कर्तव्य

महाराजा कुबेर के राज्य में कई लोग संपन्न थे। वक़्त पर फसलें अच्छी होती थीं। लेकिन राजा जनता की भलाई की चिंता किये बिना अपना समय सुख-भोगों में बिता देते थे और शासन का कार्य राजकर्मचारियों पर छोड़ रखा था। इस कारण राज्य में धन-धान्यों की समृद्धि के होते हुए भी जनता को समय पर वे चीज़ें प्राप्त नहीं हुईं। इस कारण साधारण प्रजा भूख और गरीबी से तड़पने लगी थी।

उसी राज्य में सुचोर नामक एक डाकू निकल आया। उसने यह बात अच्छी तरह से समझ ली कि अमीर लोग गरीबों की सृष्टि कैसे कर रहे हैं। उस समय से वह अमीरों की संपत्ति लूटकर गरीबों में बांटने लगा।

इस कारण देश की आम जनता सुचोर के प्रति अत्यंत आदर दिखाने लगी।

सुचोर की चोरियों के बारे में राजा के पास कई शिकायतें पहुँचीं। लेकिन उसे पकड़ने के लिए राजा ने जो भी प्रयत्न किये, वे सफल न हुए। कुशल भेदिये भी सुचोर का पता न लगा पाये। इसका कारण यह है कि वह चोर विद्या में प्रवीण था, अलावा इसके वह आम जनता के बीच बड़ी आसानी से घुल-मिल जाता था।

राजा के सारे प्रयत्न जब बेकार साबित हुए तब उन्होंने सुचोर को पकड़नेवाले को एक हज़ार सिक्के पुरस्कार देने की घोषणा की। इस पर भी कोई फ़ायदा न रहा। पुरस्कार की राशि एक हज़ार से दस हज़ार तक, फिर दस हज़ार से एक लाख सिक्के तक बढ़ा दी गई। फिर भी किसी ने सुचोर का हुलिया नहीं बताया। दरियाफ़्त करने पर यही पता चला कि साधारण जनता में सुचोर बहुत ही

लोकप्रिय है, इस कारण एक करोड़ सिक्के देने पर भी कोई भी उसका रहस्य बताने को तैयार नहीं है।

इस पर राजा ने एक दूसरी योजना बनाई। कुछ भोले लोगों पर झूठ-मूठ का यह आरोप लगाकर उन्हें कारागार में बंद करवाया कि वे लोग सुचोर का पता जानते हुए भी प्रकट नहीं कर रहे हैं। राजा का उद्देश्य यह था कि कम से कम उन भोले लोगों को कारागार से छुड़ाने के लिए वह प्रकट हो जाएगा, मगर ऐसा न हुआ।

इस पर राजा ने क्रोध में आकर दो भोले लोगों को फांसी के तख्ते पर चढ़वाया और सारे देश में यह ढिंढोरा पिटवाया कि वे दोनों सुचोर के अनुचर हैं, उन्होंने कई अत्याचार किये हैं, जिस वजह से उन्हें फांसी की सजा दी गई है। साथ ही सुचोर के अन्य अनुचरों का भी यही हाल होगा।

इस घटना के दूसरे ही दिन सुचोर स्वयं राजा के सिपाहियों के हाथों में खुद पकड़वाया और राजा के सामने हाज़िर किया गया।

राजा ने सुचोर से पूछा—"तुम कैसे निर्दय व्यक्ति हो? अकारण ही तुम्हारे दो अनुचरों के मरने के बाद प्रकट हुए? पहले ही तुम प्रकट हो जाते तो उन दोनों के प्राण बच जाते।"

इसके उत्तर में सुचोर ने राजा से निड़रतापूर्वक पूछा—"आप भी कैसे राजा

हैं? यह जानते हुए कि उन भोले लोगों को फांसी की सजा देना अन्याय है, आपने उन्हें मृत्यु दण्ड दिया।"

"चोर को पकड़ने के लिए जब कोई उपाय नहीं रह जाता है, तब राजा को थोड़े से अन्याय करने पड़ते हैं। इसी कारण मैंने उन्हें फांसी की सजा दी।" राजा ने जवाब दिया।

"क्या आप ने कभी सोचने का प्रयत्न किया कि चोर को पकड़ने के लिए दूसरा उपाय क्यों नहीं रह गया था?" सुचोर ने फिर पूछा।

"तुम्हारे पास लूट का धन है न? उसे तुमने जनता को घूस के रूप में दिया होगा।" राजा ने कहा।

"मैं घूस कहाँ तक दे सकता हूँ? कितने लोगों को दे सकता हूँ? स्वार्थ से प्रेरित हो मैं कितने लोगों का प्रेम पा सकता हूँ? हो सकता है कि मैं चोर हूँ, पर एक राजा को जो कर्तव्य करना चाहिए था, वह कार्य मैं करता रहा, इस वजह से जनता मुझे एक राजा से भी ज्यादा मानती थी। आप के एक लाख सिक्कों के वास्ते वे लोग मुझ जैसे व्यक्ति को छोड़ नहीं सकते। आप ने जब भोले लोगों को बन्दी बनाया, तब भी जनता ने मुझे आप के सामने आने नहीं दिया। भोले लोगों की बलि होने के बावजूद भी वे मुझे छोड़ने के लिए तैयार नहीं हुए। मैं ही उस अत्याचार को सहन नहीं कर
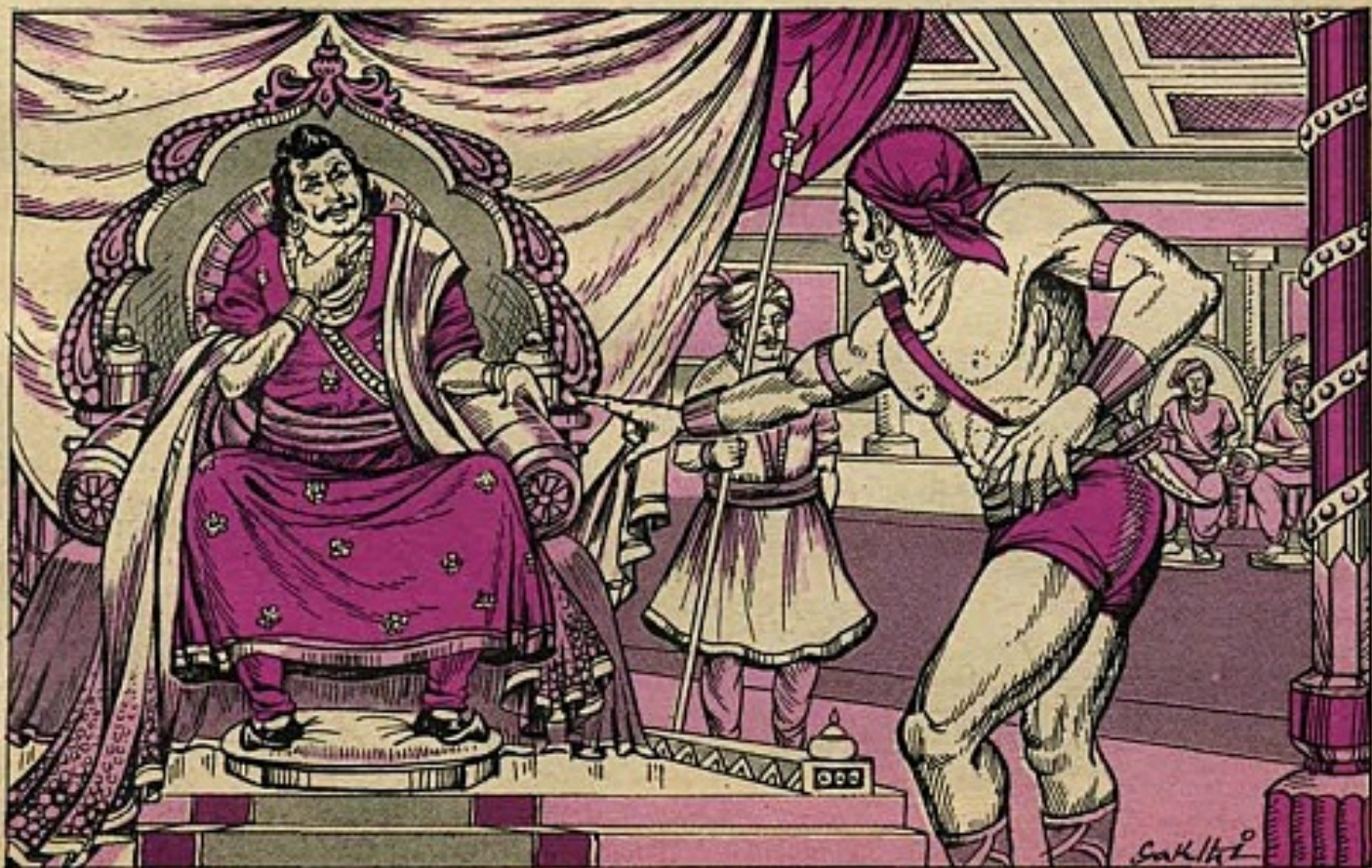
पाया और आप के सामने हाज़िर हुआ। इस वक़्त भी आप मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। मुझ पर जरा सी भी मार पड़ गई तो अपार जन समुद्र आप को डुबो देगा।" सुचोर ने स्पष्ट कह दिया।

सुचोर की बात को सत्य साबित करते हुए उसे बन्दी होने की खबर सुनकर लाखों लोग चारों तरफ़ से राजधानी में आ पहुँचे और सुचोर को मुक्त करने के लिए नारे लगाने लगे।

यह समाचार सुनते ही राजा विस्मय में आ गये, उन्होंने मज़ाक करते हुए पूछा—"तुम कहते हो कि राजा को जो कर्तव्य करना चाहिए, वह तुमने किया है। वह क्या है? चोरी? डकैती?"

"नहीं, राजा का कर्तव्य जनता की भलाई करना है। उनकी जरूरतों की पूर्ति करनी है। आप ने ये काम नहीं किये, मैंने किये हैं। इसीलिए मैं साधारण चोर होकर भी राजा के वश में नहीं आया।" सुचोर ने कहा।

"तब तो इस वक़्त तुम क्या चाहते हो? इस देश पर शासन करना चाहते हो?" राजा ने पूछा।

"ऐसी सामर्थ्य और ऐसी इच्छा मेरे भीतर नहीं है। मेरा यही आप से निवेदन है कि आप ऐसा शासन न कीजिए जिसे देख लोग यह समझे कि राजा से भी मुझ जैसा चोर ही उत्तम है। यदि कोई भी राजा जनता की भलाई का ख्याल रखते हुए शासन करे तो मुझ जैसे चोर अपने आप गायब हो जायेंगे। इससे अधिक मैं कुछ कहना नहीं चाहता।" यों समझाकर सुचोर वहाँ से चला गया।

राजा कुबेर ने सुचोर को बन्दी बनाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। राजा इस बात के लिए लज्जित हुए कि वे एक चोर के समान यश और जनता के बीच लोकप्रियता प्राप्त नहीं कर पाये। उस दिन से राजा ने वैभव-विलासों को तिलांजली देकर बड़ी लगन के साथ राज्य करना शुरू किया।

पराया धन

अंधेरा हो चला था। भारी वर्षा शुरू हो गई। खाना खाकर माता प्रसाद किवाड़ बंद करने गया तो देखा, कोई अजनबी बाहर चबूतरे पर खड़ा है। वह व्यक्ति पानी में भीग गया था। सूखे कपड़े से सर पोंछ रहा था। उसकी बगल में कपड़ों की एक गठरी थी। उसके दायें हाथ में छठी उंगली थी।

माता प्रसाद ने उस आदमी को परखकर देखा, उसे अन्दर आने का स्वागत करते बोला–"शायद आप भीग चुके हैं। अन्दर आकर कपड़े बदल लीजिए।"

"मैं आप का आभारी हूँ।" ये शब्द कहते वह अजनबी घर के भीतर आया। वह बड़ा ही गरीब मालूम हो रहा था। जब वह भीतरी कमरे में आकर कपड़े बदलकर उन्हें सुखा रहा था, रसोई घर साफ़ करके मंगीबाई आ पहुँची। उसने अजनबी को देखा। अपने पति को भीतर बुलाकर पूछा–"किसी रास्ते चलनेवाले को तुमने घर के अन्दर बुलाया? कोई अक़्लमंद आदमी ऐसा करता है?"

"गरीब हुआ तो क्या हुआ? वह तो हमारा मेहमान है। जल्दी रसोई बनाओ।" माता प्रसाद बोला।

"वाह, यह भी खूब है! अन्दर बुलाकर सोने के लिए जगह दी, तिस पर उसे दावत भी खिलाओगे? यह सब नहीं चलने का। वर्षा के थमते ही उस दरिद्र को बाहर भेज दो।" मंगीबाई ने कहा।

पत्नी का हठ देख माता प्रसाद बरामदे में पहुँचा और बाहर झांककर देखा। तब अपनी पत्नी से बोला–"पानी के रुकने के लक्षण दिखाई नहीं देते। भले ही तुम उसे खाना न खिलाओ, पर चटाई देकर रात यहीं काटने को बतायेंगे।"

जगत नारायण सिन्हा

"यह सब नहीं चलने का, ऐरे-गैरे को आश्रय दे तो क्या लोग हमारे घर लूट न लेंगे?" मंगीबाई बोली।

"उस आदमी का तुम्हें परिचय हो जाय, तो तुम ऐसी बातें न कहोगी।" इन शब्दों के साथ माता प्रसाद ने यह वृत्तांत मंगीबाई को सुनाया।

माता प्रसाद ने अपना बचपन आवारागर्दी में बिताया था। बीस साल की उम्र हो जाने पर भी वह किसी काम के लायक़ न बना। उसने अपने बाप से पूछा कि वह व्यापार करना चाहता है, इसलिए मूल धन के रूप में थोड़ी पूंजी दे। पिता ने नहीं दिया। एक दोस्त की प्रेरणा से माता प्रसाद अपने ही घर में दो हज़ार चोरी करके दूसरे गाँव में गया। वहां पर उसके दोस्त ने माता प्रसाद के द्वारा कोई व्यापार करवाने का अभिनय करके सारा धन हड़प लिया और माता प्रसाद को वहीं पर छोड़ भाग गया।

माता प्रसाद को मालूम हुआ कि उसका पता लगाकर उसे अपने गाँव ले जाने के लिए उसका पिता आ रहा है, तब वह उस गाँव को छोड़ जंगल के रास्ते चल पड़ा।

एक पहाड़ी नाले के पास एक आदमी नहा-धोकर बदन पोंछते दिखाई दिया। उसका सर गंजा था और उसके दायें हाथ में छे उंगलियां थीं।

उस आदमी के पीछे मेंड पर एक पेटी थी। माता प्रसाद यह सोचकर कि छे उंगलियोंवाले आदमी ने उसे नहीं देखा है, वह उस पेटी को लेकर चल पड़ा। थोड़ी दूर चलने के बाद पेटी खोलकर उसने देखा, उसमें सोने के सिक्के थे।

माता प्रसाद बड़ा खुश हुआ, घर पहुँचकर अपने पिता को सोने के सिक्के दिखाकर बोला—"लीजिये, यह मेरी कमाई है।"

"तुमने कौन सा व्यापार किया?" पिता ने शंका भरे मन से पूछा।

"यह मत पूछियेगा! इस धन से मैं कपड़ों का व्यापार शुरू करूँगा।" माता

प्रसाद ने जवाब दिया। व्यापार खूब चमका। उसने मंगीबाई से शादी कर ली, फिर उसकी संपत्ति भी बढ़ती गई।

ये सारी बातें अपनी पत्नी को सुनाकर माता प्रसाद बोला–"इस वक़्त हम जो कुछ सुख भोग रहे हैं, यह उसी आदमी की कृपा का फल है। वह तो हमारे लिए ईश्वर के समान है।"

"वह धन उसकी क़िस्मत में नहीं बदा था। उसे अगर हम तुरंत यहाँ से भगा न देंगे तो बाद को हमें पछताना पड़ेगा।" मंगीबाई ने विकल होकर कहा।

मगर माता प्रसाद उस भारी वर्षा के समय अजनबी को अपने घर से निकाल न पाया। उसके लेटने के वास्ते एक चटाई दी। बातों के सिलसिले में यह जान लिया कि उसका नाम जगन्नाथ है और वह एक व्यापारी के यहाँ मुँशी है।

मंगीबाई ने अपने पति को खरीखोटी सुनाई, तब सो गई। मगर माता प्रसाद को नींद न आई। जगन्नाथ भयंकर दरिद्रता का अनुभव करता है। उसकी मदद जरूर करनी होगी। यों विचार करके माता प्रसाद ने पाँच हज़ार रुपये पोटली बांधकर गुप्त रूप से जगन्नाथ के कपड़ों की गठरी में छिपा दिया, तब निश्चिंत होकर सो गया। सवेरा होते ही जगन्नाथ माता प्रसाद के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर चला गया। पर दुपहर के वक़्त वह फिर लौट आया और बोला–"मैं नहीं जानता कि यह पोटली मेरे कपड़ों की गठरी में कैसे आ गई? और क्यों? आप के घर में ही आई है, इसलिए आप इसे ले लीजिए।" यों समझाकर जगन्नाथ ने वह पोटली माता प्रसाद के हाथ में थमा दी।

जगन्नाथ की सचाई व ईमानदारी पर माता प्रसाद की आँखों में आँसू आ गये। यह सोचकर वह ग्लानि से भर उठा कि ऐसे व्यक्ति का धन उसने हड़प लिया है।

इसके बाद माता प्रसाद बोला–"महाशय, मैंने ही यह पोटली आप के कपड़ों में रख

दी थी। लगता है, फिलहाल आप की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। आप यह धन रख लीजिएगा।"

इस पर जगन्नाथ ने हँसकर कहा– "पराया धन मेरे लिए मेरी छठी उंगली के समान है। उस धन से जो भी खरीदकर खा लूँ, वह पचेगा नहीं, उससे खरीदे गये मकान में सुख और शांति नहीं रहेगी। कपड़े खरीदने पर सुंदर न होंगे। इसलिए मुझे यह धन नहीं चाहिए। मेरे श्रम का फल मेरे लिए पर्याप्त है।"

माता प्रसाद से अब रहा नहीं गया। उसने धन की पेटी चुराने की बात बताकर कहा–"आप कृपया मुझे क्षमा कर दीजिए! मेरी जो कुछ संपत्ति है, सब आप की है। यह आप के लिए पराया धन कभी नहीं हो सकता।"

जगन्नाथ विस्मय में आकर बोला– "उस दिन उस पहाड़ी नाले के पास मैंने ज़रूर स्नान किया था, मगर वह पेटी मेरी नहीं है। सच बात तो यह है कि मैंने उस पेटी को देखा तक नहीं है। उस पेटी के मालिक को कोई बाघ या शेर उठा ले गया होगा। वह आप के हाथ लगी। मुझे बहुत दूर जाना है, आज्ञा दीजिए।" यों कहकर जगन्नाथ वहाँ से चला गया।

जगन्नाथ की बातें माता प्रसाद के कानों में बराबर गूँजती रहीं। उसे लगा कि उसकी बातों में सचाई है। खुद उसे भी उसके घर में कोई सुख न था। बदहजमी की वजह से उसका खाया हुआ खाना पचता न था। उसका स्थूल शरीर देखने में विकृत लगता था।

उस वक़्त मंगीबाई घर पर न थी। माता प्रसाद ने अटारी पर से वह पेटी उतारी जो उसे मिली थी। उसमें सोने के सिक्के भर दिये, पेटी ले जाकर गाँव के मुखिये के हाथ सौंपा, तब बोला–"महाशय, आप कृपया यह धन जनता के हित के कामों में लगाइयेगा।" यों कहकर वह अपने घर लौट आया।

सफल यात्रा

ब्रह्मदत्त जब काशी राज्य पर शासन कर रहे थे, उन दिनों में बोधिसत्व ने एक वैश्य परिवार में जन्म लिया। बड़े होने पर बोधिसत्व पांच सौ गाड़ियों पर माल लादकर पूरब से पश्चिम तक, पश्चिम से पूरब तक व्यापार किया करते थे।

काशी नगर में ही एक मंदमति व्यापारी था। वह सचमुच मंदमति ही था। एक बार बोधिसत्व अपनी गाड़ियों पर माल लादकर यात्रा के लिए तैयार था, तब मंदमति ने भी उसी समय यात्रा पर निकलने की अपनी इच्छा प्रकट की।

बोधिसत्व ने मंदमति को समझाया—"तुम्हारी और मेरी गाड़ियाँ अगर एक साथ रवाना हो जायें तो रास्ता संकरीला बनकर कठिनाई पैदा हो सकती है। इसलिए एक के पीछे दूसरे का रवाना होना उचित होगा। अब तुम्हीं बताओ, पहले तुम रवाना होगे या मैं रवाना हो जाऊँ? तुम्हारी इच्छा के अनुसार ही चलेंगे।"

मंदमति ने अपने मन में यों सोचा—"पहले मैं रवाना हो जाऊँ तो अनेक लाभ हो सकते हैं! रास्ता ठीक रहेगा! पशुओं को अच्छी घास और मनुष्यों को अच्छी सब्जी व तरकारियाँ मिल सकती हैं। स्वच्छ जल भी मिल जाएगा! माल का दर भी अपनी इच्छा के अनुसार निर्णय कर सकते हैं।"

पर बोधिसत्व ने सोचा—"एक दल की यात्रा के बाद उस रास्ते पर चलना ज्यादा आसन होगा! एक बार जहाँ मवेशी चरते हैं, वहाँ पर घास दुगुना उग सकती है। सब्जी व तरकारियों की भी यही बात है! पहले जो लोग यात्रा करते हैं, वे लोग कष्ट उठाकर पानी के सोतों का पता

लगाते हैं। या पानी के वास्ते कुएँ खोदते हैं। वे कुएँ बाद को यात्रा करनेवालों के काम आते हैं! नये स्थानों पर पहली बार जाकर दरों का सौदा करना व्यापार की दृष्टि से उतना अच्छा भी नहीं है। पहले पहुँचनेवाले व्यापारी जो दर निर्धारित करते हैं, उनके आधार पर पीछे चलनेवाले अच्छे ढंग से व्यापार कर सकते हैं।"

यों विचार करने के बाद मंदमति ने पहले यात्रा करने की इच्छा प्रकट की, इस शर्त को बोधिसत्व ने खुशी से मान लिया।

मंदमति को जिस स्थान पर चलना था, वह साठ योजन की दूरी पर था। बीच में बड़ा रेगिस्तान पड़ता था। इसलिए यात्रा के लिए आवश्यक खाद्य पदार्थ और पीने के लिए पीपों में पानी का इंतजाम करके मंदमति ने सोचा कि बोधिसत्व को उसने चकमा दिया है, यों विचारकर खुशी से यात्रा पर चल पड़ा।

मंदमति का सार्थवाह बड़ी दूर तक यात्रा करके आखिर एक रेगिस्तान में पहुँचा। रेगिस्तान में थोड़ी दूर तक यात्रा करने के बाद उसके सामने से एक अनोखा वाहन आ गुजरा। उसमें अच्छी नस्ल के सफ़ेद बैल जुते हुए थे। उसमें एक राजपुरुष बैठा हुआ था। उस वाहन के आगे सेवक तलवार, ढाल, धनुष और बाण धारण करके चल रहे थे। गाड़ी के पहियों में कीचड़ लगा था। सब के सरों पर कमल नाल लपेटे गये थे। उनके हाथों में कमल सुशोभित थे।

राजपुरुष ने मंदमति से कहा—"ओह, कैसी भयंकर वर्षा है? मूसलधार वर्षा हो रही है। नदी-नालों में बाढ़ आ गई है। तुम लोग तो उसी ओर जा रहे हो न? इन पीपों में पानी भरकर क्यों ले जा रहे हो? नाहक़ यह भारी बोझ क्यों उठाते हो? पानी उड़ेलकर हल्के हो यात्रा क्यों नहीं करते?"

उस रथ में सवार व्यक्ति और उसका परिवार नर भक्षी यक्ष थे। वे लोग

रेगिस्तान के यात्रियों को इसी प्रकार धोखा देकर वे जब भूख-प्यास से मर जाते हैं, तब उन्हें नोच-नोचकर खा जाते हैं।

इस बात को समझे बिना मंदपति ने अपने सारे पीपों के पानी को गिरवाकर खाली करवाया, तब वह आगे बढ़ा। राजपुरुष ने जो जंगल दिखाया, वह दूर पर दिखाई तो दे रहा था, मगर काफी दूर चलने के बाद भी वे लोग उसके समीप पहुँच नहीं पा रहे थे।

इस कारण सब लोग प्यास के मारे परेशान थे। पीने को एक बूंद पानी तक न बचा था। गला सूखने की वजह से एक एक करके सभी लोग मरने लगे। धीरे-धीरे बैल भी गिरने लगे। तब मृत मानवों तथा पशुओं को भी खाकर यक्षों ने उनके कंकालों को रेगिस्तान के बालू में फेंक दिया।

पैंतालीस दिन बीतने पर बोधिसत्व भी अपने व्यापारिक दल के साथ उसी रास्ते से चल पड़े। उन्होंने भी यात्रा के लिए आवश्यक रसद और पीपों में पानी का प्रबंध किया। जब वे लोग रेगिस्तात के समीप पहुँचे, तब बोधिसत्व ने अपने अनुचरों को समझाया–"मुझे बताये बिना किसी को एक बूंद पानी को भी नहीं गिराना है। ऐसे रेगिस्तान में जहरीले पेड़-पौधे होते हैं, इसलिए मुझसे कहे बिना किसी को फल व पत्ते खाना मना है।"

व्यापारिक दल थोड़ी दूर और आगे बढ़ा, तब राजपुरुष सामने से आ गुज़रा और उसने बोधिसत्व से वे ही बातें बताईं जो बातें उसने मंदमति को बताई थीं। इसके जवाब में बोधिसत्व ने कहा– "अच्छी बात है! आप अपने रास्ते जा सकते हैं। हम तो व्यपारी हैं। आगे जब तक हमें कहीं पानी दिखाई न देगा, तब तक हम यह पानी फेंक नहीं सकते। तभी हम इस बोझ को उतार देंगे।"

इसके बाद यक्ष चला गया।

यक्ष की बातें सुन बोधिसत्व के सेवकों ने पानी फेंकना चाहा, लेकिन बोधिसत्व ने मना करते हुए उन्हें समझाया–"तुम लोगों ने क्या कभी सुना भी है कि इस प्रदेश में कहीं तालाब है? यक्ष बताता है कि इस प्रदेश में मूसलधार वर्षा हो गई है, पर कहीं नमी से भरी बयार भी इधर चली है? आसमान में कहीं मेघ दिखाई दे रहे हैं? बिजली चमकी? मेघों का गर्जन सुनाई दिया? ये लोग यक्ष हैं। हमारे मर जाने पर हमें खाने के लिए ये लोग कोई चाल चल रहे हैं। हमसे पहले जो व्यापारी दल गया, उन्हें इन लोगों ने खाया होगा। उनके कंकाल हमें कहीं रास्ते में दिखाई दे सकते हैं।"

बोधिसत्व के कहे अनुसार थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर मंदमति के दल की पाँच सौ गाडियाँ और उनमें भरा हुआ माल दिखाई दिया। उनके चतुर्दिक मनुष्य और पशुओं के कंकाल भी बिखरे पड़े थे। उन्हें देख सब लोग अचरज में आ गये।

तब बोधिसत्व ने कहा–"देखते हो न? मंदमति ने दूर की बात सोचे बिना पानी फेंक दिया होगा, इसका फल क्या हुआ है?"

बोधिसत्व ने उसी प्रदेश में उस रात का पड़ाव डाला, दूसरे दिन सवेरे गाड़ियों में बचे अच्छे माल को अपने साथ लेकर आगे बढ़े। खूब लाभ कमाकर बोधिसत्व अपने नगर में सकुशल लौट आये, पर इस यात्रा में उसके एक अनुचर की भी कोई हानि न हुई।
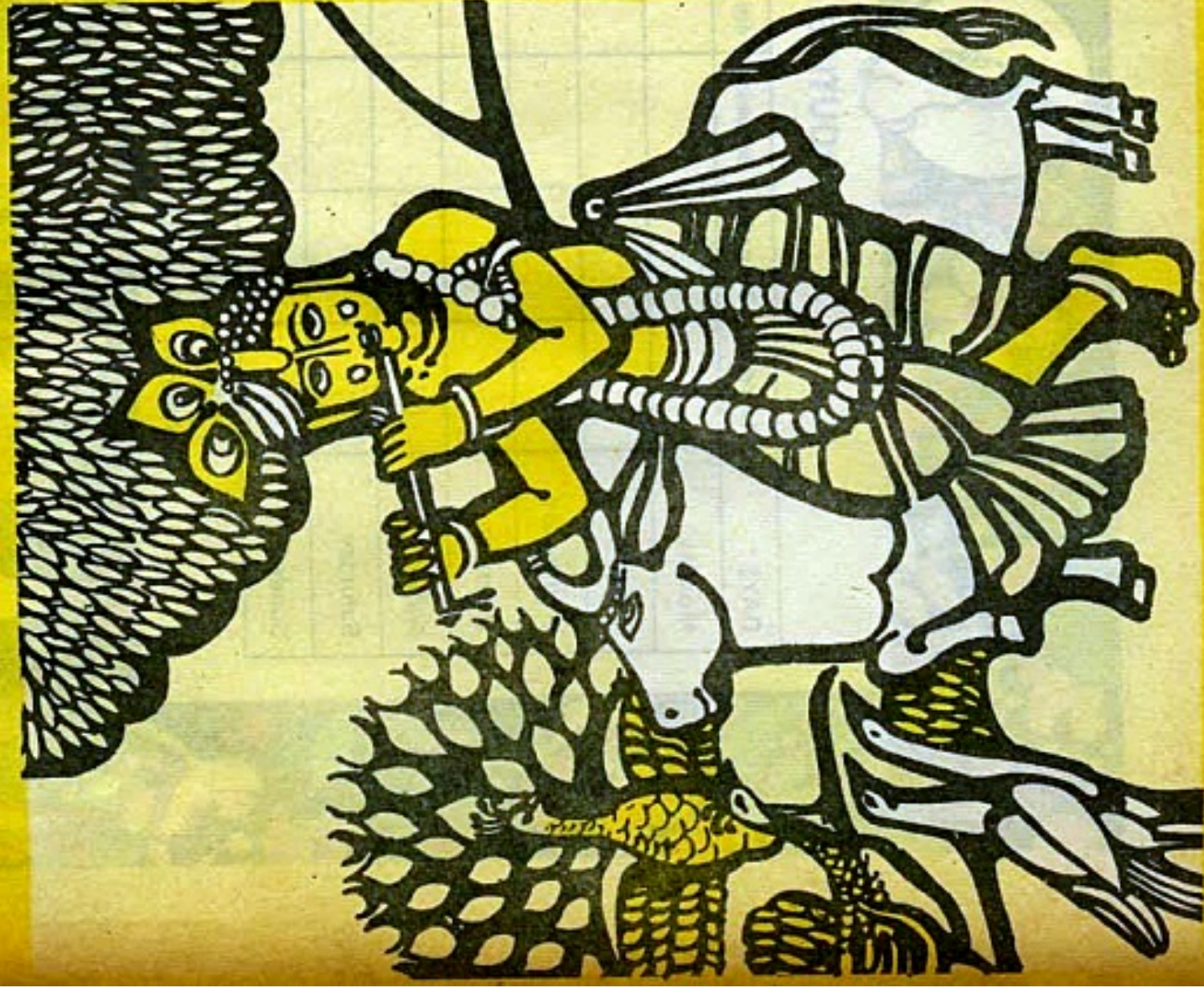
ROUTINE

DAYS	1st period	2nd period	3rd period	4th period	5th period	6th period	7th period
Monday							
Tuesday							
Wednesday							
Thursday							
Friday							
Saturday							
Sunday							

CHANDAMAMA A monthly magazine for children
where the old become younger and the young grow older.

CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School

CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School

CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School

CHANDAMAMA
Name
Standard
Section
Subject
School

भव्यता से ओतप्रोत हैं।

विश्व विख्यात महा काव्यों, प्रेरणादायक दंत कथाओं, ऐतिहासिक इतिवृत्तों, सम-सामयिक जीवनियों, धर्म तथा पुराणों में हमारी संस्कृति प्रतिबिंबित है। हमारी प्राचीन परंपराओं, अचार-विचारों और विश्वासों से पूर्ण हमारे संस्कृतिक वैभव से वर्तमान पीढी को उपेक्षित रखा नहीं जा सकता।

प्रत्येक भारतीय परिवार में बच्चों को महान मनीषियों तथा वीरों के शौर्य, पराक्रम, धर्म व न्यायप्रियता की कहानियाँ सुनाई जाती हैं जिससे युवा पीढ़ी के मन में सरलतापूर्वक समग्र रूप में विचक्षणशीलता का बीजारोपण कर सके।
ये कहानियाँ साधारणतया मौखिक रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी जो चली आ रही थीं, उन्हें बड़े प्रयास के साथ बच्चों के वास्ते लिपि बद्ध करके पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराया नहीं गया है।
चन्दामामा १९४७ में इस अभाव की पूर्ति करने के आशय से स्थापित हुआ जिससे इन पीढ़ियों के बीच की दूरी को पाट सके। यही आज एक मात्र ऐसा प्रमुख पत्र है जिसने भारतीय बच्चों के भीतर हमारी सांस्कृति के जागरण का शंखनाद किया है। चन्दामामा ने अत्यंत विशिष्ट शैली में रोचक पाठनीय सामग्री के द्वारा भारत के बाहर के लोगों के वास्ते भी कथा-कथन का सूत्रपात किया है। यह भी ध्यान देने की बात है कि चन्दामामा ने अब तक

४३१० कहानियाँ, १३३ पद्य-कथायें, तथा १२० धारावाही जो महाकाव्यों, पुराणों, लोक कथाओं, अद्भुत कथाओं, जीवनियों तथा इतिहास के रूप में हैं, प्रकाशित की हैं।
अंग्रेज़ी को भी मिला कर तेरह भाषाओं में छपनेवाला अपने ढंग का एक मात्र लोकप्रिय पत्र चन्दामामा।

चन्दामामा की लोकप्रियता का एक मात्र प्रमाण प्रति मास इसके पढ़नेवाले १२,०००,००० बच्चे हैं।

चन्दामामा की प्रचारित संख्या लगभग ८००,००० है जो प्रति मास भारत तथा पूर्वी एशिया के परिवारों, पाठशालाओं तथा पुस्तकालयों में पहुँचता है।

अपूर्व चिंतन

राजा शुद्धोदन ने आदेश दिया–"राजकुमार कष्टों के बारे में न सुने और न उन्हें देखें।" साथ ही सिद्धार्थ के वास्ते उन्होंने समस्त प्रकार की सुविधाओं का प्रबंध किया। उनके मनोरंजन के वास्ते श्रेष्ठ नर्तक और गायक नियुक्त किये गये।

कालक्रम में यशोधरा के एक पुत्र पैदा हुआ। राजा शुद्धोधन पहले यह सोचकर डरते थे कि राजकुमार जब तब वैराग्य प्रदर्शित करते हैं, न मालूम उनका भविष्य क्या होगा? पर अब सिद्धार्थ के पुत्र को देख उन्होंने सोचा कि वे महल से बाहर न जायेंगे।

एक दिन सिद्धार्थ अपने पिता की अनुमति लेकर उद्यान की ओर चल पड़े। रास्ते में एक वृद्ध उन्हें दिखाई दिया, जिसकी कमर झुकी हुई थी। एक बार एक रोगी और दूसरी बार मृत व्यक्ति दिखाई पड़े। सिद्धार्थ ने कभी ऐसे दृश्य देखे न थे, इसलिए वे व्याकुल हो उठे।

चौथी बार उन्हें एक सन्यासी दिखाई दिया, जिनका मुख मण्डल बड़ा ही शांत था। उस दिन राजकुमार के प्रश्नों के उत्तर में सारथी चेन्न ने बताया कि बुढ़ापा, रोग और मृत्यु से कोई भी मानव बच नहीं सकता। सन्यासी तो लौकिक बंधनों को तोड़कर सदा ईश्वर का अन्वेषण किया करता है!

इसके बाद सिद्धार्थ अपने इन अनुभवों के बारे में चिंतन-मनन करने लगे। मानव दुख क्यों भोगता है? अगर सांसारिक सुखों से मनुष्य संतुष्ट हो सकता है तो वह क्यों सन्यास लेता है? इन प्रश्नों का समाधान पाने के हेतु एक दिन रात को वह महल से निकल पड़े।

राजमहल के द्वार पर एक विचित्र आकृति दिखाई दी, उसने गुप्त रूप से यों कहा—"राजकुमार, तुम्हें बड़ा ही यश और सुख प्राप्त होगा। तुम राजाधिराज बन जाओगे। इसलिए तुम यहाँ से मत जाओ।" ये शब्द कामदेव ने बताये थे, जो सत्य के अन्वेषकों को गलत रास्ते पर ले जानेवाली दुष्ट शक्ति थी!

सिद्धार्थ ने घोड़े पर सवार हो अपने अनुचर चेन्न को साथ ले लिया। जंगल में प्रवेश करते ही वे घोड़े से उतर पड़े, तब चेन्न को आदेश दिया कि वह घोड़ा लेकर राजमहल को लौट जाये। इसके बाद उन्होंने अपने लंबे केशों को तलवार से काट डाला।

दूसरे दिन सवेरे चेन्न ने राजकुमार के निष्क्रमण के संबंध में राजा तथा अन्य लोगों को भी बताया। उसी समय अरण्य के उस पार सिद्धार्थ ने एक भिखारी को अपने वस्त्र देकर उसके वस्त्र ले लिये। इस तरह वस्त्र बदल लिये।

इसके बाद सिद्धार्थ कई प्रदेशों में गये। अनेक प्रसिद्ध ज्ञानियों से मिले। वे जो कुछ जानते थे, उनसे वे सारी बातें जान लीं। पर उन्हें लगा कि सत्य का अन्वेषण उन्हें स्वयं ही करना होगा। इसलिए ध्यान करने के लिए उचित स्थान की उन्होंने खोज की।

आख़िर सिद्धार्थ उरुवेल वन में पहुँचे । एक वटवृक्ष के नीचे बैठकर ध्यान मग्न हो गये । देशाटन करनेवाले पांच तपस्वियों ने उन्हें देखा, उन्हें एक महा पुरुष मानकर उनकी सेवा-शुश्रूषा की । सिद्धार्थ ने आत्मा के अन्वेषण में छे वर्ष बिताये ।

अंत में उन्हें ज्ञात हुआ कि शरीर को कष्ट देने से उनके लक्ष्य की सिद्ध नहीं हो सकती । सुजाता नामक युवती ने उनके वास्ते जो आहार लाकर दिया, उसे उन्होंने ग्रहण किया । वे पांचों शिष्य यह सोचकर उन्हें छोड़कर चले गये कि आहार ग्रहण करने से उनकी निष्ठा भंग हो गई है ।

इसके बाद सिद्धार्थ नदी तट पर स्थित बोधिवृक्ष के नीचे चले गये । वह पूर्णिमा की रात थी । उन्हें ऐसा भान हुआ कि उनके चतुर्दिक शांति व्याप्त हो गई है और उनके भीतर अपूर्व प्रकाश का विकास हुआ है । उन्हें इस तरह ज्ञानोदय हुआ, साथ ही उन्होंने बुद्धत्व प्राप्त किया ।

अज्ञात-चोर

रत्ननाभ नामक जौहरी के यहाँ विट्ठल नामक एक कर्मचारी था। वह बड़ा मेहनती और ईमानदार भी था। वह जानता था कि उस पर मालिक का गहरा विश्वास है। उसके मन में एक बार अचानक यह दुर्बुद्धि पैदा हो गई कि उस विश्वास के बल पर एक बार चोरी कर ले। एक दिन जब दूकान बंद होनेवाली थी, तब वह एक रत्नहार को अपने कपड़ों में छिपाकर घर ले गया।

दूसरे दिन दूकान में प्रवेश करते ही रत्ननाभ ने जान लिया कि एक रत्नहार खो गया है। वह रत्नहार जमीन्दार के वास्ते विशेष रूप से बनाया गया था। रत्नहार जिस पेटी में रखा गया था, वह पेटी सुरक्षित थी, पर हार गायब था।

रत्ननाभ को आश्चर्य हुआ। क्योंकि उसकी दूकान में यही पहली चोरी थी। उस दूकान में विट्ठल के अलावा दो और कर्मचारी थे। वे दोनों भी कई सालों से अत्यंत विश्वासपात्र बनकर काम कर रहे थे। वास्तव में विट्ठल ही नया कर्मचारी था। फिर भी रत्ननाभ का मन उस पर संदेह करने को न माना।

रत्ननाभ ने इधर कुछ दिनों से विट्ठल की हर गति-विधि पर निगरानी रखी और वह उस निर्णय पर पहुँचा कि उसके मन के किसी कोने में चोरी करने की वृत्ति नहीं है। इस कारण रत्ननाभ अपने कर्मचारियों में से किसी पर संदेद न करने के संकट में पड़ गया। उसे एक ही उपाय सूझा कि चोरी हो जाने की घटना को प्रकट किये बिना तीनों कर्मचारियों पर कड़ी निगरानी रखना।

दूकान में तीनों कर्मचारी अपना अपना काम लगन के साथ करते जा रहे हैं।

उमा रानी

एक बार धनपति नामक एक व्यापारी रत्ननाभ की दूकान में आया और बोला—"दोस्त! क्या तुमने यह खबर सुनी? मेरी दूकान में चोरी गई है।"

"तुम्हारी दूकान में चोरी हो गई? क्या चोर का पता लग गया है?" रत्ननाभ ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"क्यों नहीं लगेगा? कल शाम को मैंने देरी से दूकान बंद की। दूकान पर ताला लगाने के पहले मैंने अपनी आदत के मुताबिक़ सारे गहने देखे, उनमें एक कंठहार गायब था। उसी समय मैंने कर्मचारियों को रोककर उनकी तलाशी ली। कई दिनों से विश्वासपूर्वक काम करनेवाला रंगनाथ अपने कपड़ों में छिपाये हुए था। यह तो काल की महिमा है। जानते हो, उस पर मेरा कैसा गहरा विश्वास था?" धनपति ने कहा।

"तो तुमने रंगनाथ को सिपाहियों के हाथ नहीं सौंपा? रत्ननाभ ने धनपति से पूछा अपने कर्मचारियों पर निगरानी रखते हुए।

"ऐसा कठोर दण्ड क्यों दूं? उसे खूब मार-पीटकर भेज दिया। आख़िर गहना तो मिल गया है न? यही उसके वास्ते भारी सजा है।" धनपति ने कहा।

"दोस्त! तुमने बड़ी गलती की। ऐसे दुष्ट को यों ही छोड़ना नहीं चाहिए था। अगर मैं होता तो उसकी पिटाई करने के साथ सजा भी दिला देता।" रत्ननाभ ने कहा।

ये बातें सुनते ही विट्ठल के हाथ की सुराही फिसलकर नीचे गिर गई। विट्ठल में यह परिवर्तन देखने पर पहली बार रत्ननाभ के मन में उसके प्रति संदेह हुआ। अलावा इसके रत्ननाभ ने भांप लिया कि वह उन दो व्यापारियों की बातें सावधानी से सुन रहा है।

इसके बाद धनपति चला गया। पर विट्ठल के मन में सिपाहियों का डर पैदा हुआ। साथ ही उसकी आँखों में कारागार के दृश्य झलकने लगे।

इस हालत में वह ज्यादा देर वहाँ पर ठहर न पाया। अपने मालिक से बोला–"मालिक, आज मेरी तबीयत ठीक नहीं है। मुझे छुट्टी दिला दीजिए।"

रत्ननाभ ने आश्चर्य का अभिनय करते पूछा–"तुम यह क्या कहते हो? अगर तुम्हारी तबीयत ठीक न थी, तो तुम काम पर क्यों आये? छुट्टी ले लेते तो मैं थोड़े ही मना करता?"

विट्ठल का चेहरा देखने पर ऐसा लगता था कि वह किसी प्रलोभन में पड़कर रत्नहार को हड़प चुका है। पर अब ऐसा व्यवहार करना जिससे वह यह समझे कि उसकी चोरी का पता दूसरों पर प्रकट नहीं हुआ है। साथ ही उसे अपनी गलती वह स्वयं सुधार सके। यों विचारकर रत्ननाभ ने कहा–"सुनो विट्ठल! मैं तुम्हें आज एक बात बताना चाहता हूँ!" यों कहकर रत्ननाभ थोड़ी देर मौन रहा।

ये बातें सुनने पर विट्ठल का चेहरा पीला पड़ गया। वह अपने मालिक की ओर सीधे देख न पाया।

रत्ननाभ फिर बोला–"वैसे बात कोई खास नहीं है। तुम कड़ी मेहनत करते हो, साथ ही बड़े इमानदार हो! इस वास्ते मैं आज से तुम्हारी मासिक तनख्वाह पचास रुपये बढ़ाता हूँ।"

विट्ठल ने रत्ननाभ की ओर ऐसी दृष्टि डाली, उसे अपने मालिक की बातों पर पूरा विश्वास न हो! उसके चेहरे के रंग

बदलने लगे। वह सोचने लगा कि कहीं उसका मालिक बिल्ली-चूहे जैसे उसके साथ कहीं स्वांग न रचता हो! चाहे जो हो, पर उसे स्पष्ट यह भान हुआ कि उसने चोरी करके बड़ी भूल की।

रत्ननाभ ने जोर देकर पूछा—"बोलते क्यों नहीं?"

"आप की दया!" विट्ठल ने बस यही कहा। उस हालत में उसे उसके मालिक की दया को छोड़ बचानेवाली कोई ताक़त न थी।

"अच्छी बात है, जाओ! तुम्हारी तबीयत के सुधरने के बाद ही काम पर आ जाओ...हाँ, सुनो! जमीन्दार का रत्नहार हमने आज ही उन्हें सौंपने का वचन दिया है न? रत्नहार अपने साथ ले जाओ, उसे जमीन्दार के हाथ सौंपकर मजूरी के रुपये ले लो! फिर जब तुम काम पर लौटोगे, तभी रुपये लेते आओ।" रत्ननाभ ने कहा।

विट्ठल को लगा कि उसकी जान में जान आ गई। उसके मन में यह हिम्मत बंध गई कि अब तक उसके मालिक को इस बात का पता न चला है कि पेटी में रत्नहार नहीं है। उसने वह खाली पेटी ले ली, उत्साह में आकर बोला—"जो आज्ञा, मालिक।" कहते जल्दी जल्दी दूकान से बाहर हो लिया।

इसके बाद विट्ठल सीधे अपने घर पहुँचा। चुराया गया हार उस खाली पेटी में रखा। जमीन्दार के हाथ उस हार को सौंपकर मजूरी के रुपये ले लिये, दूसरे दिन वे रुपये लाकर रत्ननाभ के हाथ सौंप दिया।

विट्ठल को देखते ही रत्ननाभ ने मुस्कुराते हुए पूछा—"सुनो, तुम्हारी बीमारी ठीक हो गई है न?" तब विट्ठल ने समझ लिया कि सारी बातें उसका मालिक जानते हैं।

उसने सोचा कि अब सच्ची बात छिपाये ही क्यों? फिर बोला—"हाँ मालिक! कल ही मेरी तबीयत ठीक हो गई है।"

सही निर्णय

कनकदास का पड़ोसी हरिदास बड़ा झगडालू आदमी था। वह हर छोटी-सी बात को लेकर अपने पड़ोसी कनकदास से लड़ता-झगड़ता था। कनकदास साधु स्वभाव का था, फिर भी उसे कभी कभी हरिदास को डांटना-डपटना पड़ता था।

कनकदास के पिछवाड़े का नारियल का पेड़ खूब बढ़कर हरिदास के पिछवाड़े की ओर झुक गया था। इस कारण वह हरिदास के पिछवाड़े में गिरनेवाले नारियल उन्हें लेने देता था। पर हरिदास इससे संतुष्ट नहीं हुआ। एक बार उसने कनकदास के नारियल के पेड़ के घौंद को पकने के पहले ही तोड़ लिया।

इस पर कनकदास ने आपत्ति उठाई। हरिदास ने उसे गालियाँ सुनाईं। तब कनकदास ने गाँव के मुखिये से शिकायत की। मुखिये ने आकर कहा—"हरिदास, यह तुमने क्या किया? कनकदास ने पानी देकर जिस पेड़ को पाला, उस पेड़ के फलों को तुम्हारा तोड़ लेना कहीं उचित है?"

"अजी, कोई भी पाले, इससे क्या फ़रक पड़ता है? पेड़ का शिरोभाग मेरे अहाते में है; इसलिए उसमें लगनेवाले सारे फल मेरे ही होते हैं!" हरिदास ने जवाब दिया।

मुखिये ने कनकदास की ओर मुड़कर कहा—"हरिदास का कहना भी वाजिब है। पेड़ का सर उसके अहाते में है तो पेड़ का तना तुम्हारे अहाते में। इसलिए किसी भी हालत में उसके फल तुम्हारे हाथ लगनेवाले नहीं हैं। इसलिए तुम पेड़ का तना काट डालो! पेड़ के टूटकर हरिदास के मवेशीखाने तथा घर की छत पर गिर जाय और मकान भी गिर जाय तो मैं यही फ़ैसला दूंगा कि इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है।"

फिर क्या था, दूसरे ही क्षण हरिदास ने नारियल का घौंद लाकर कनकदास के हाथ सौंप दिया। उसमें से थोड़े नारियल निकालकर कनकदास ने हरिदास को दे दिये।

वानरों का उपकार

एक शहर में एक गरीब औरत थी। उसके पति ने अच्छा नाम कमाया, लेकिन अपने पीछे एक कौड़ी भी छोड़े बिना पत्नी और पुत्र को गरीबी की हालत में छोड़ सदा के लिए आँखें मूंद लीं। उसके बेटे का नाम 'उनींद' सोमनाथ था।

अपने बाप के मरते वक़्त सोमनाथ पंद्रह साल का था। मगर वह अव्वल दर्जे का आलसी था। जब देखो, वह पड़े-पड़े सोया करता था।

सोमनाथ की माँ यही सोचती कि ईश्वर ने उसे ऐसा ही पैदा किया है, क्या करे? वह सोमनाथ को कभी कोई काम करने पर जोर न देती, वही चार-पाँच घरों में मजूरी करके अपने और अपने बेटे का पेट पालती थी। सोमनाथ की माँ जब उसे जगा देती, तब वह उठकर खाना खाता और फिर सो जाता। सोमनाथ के पड़ोस में हीरालाल नामक एक व्यापारी रहा करता था। सोमनाथ की माँ ने सुना कि हीरालाल व्यापार करने सुवर्ण द्वीप को जा रहा है। सौभाग्य से उसे उसी वक़्त मासिक वेतन मिल गया था। उसमें से पाँच चांदी के सिक्के निकालकर सोमनाथ के हाथ देकर बोली—"बेटा, तुम ये सिक्के हीरेलाल के हाथ देकर पूछो कि उनके लौटते वक़्त सुवर्ण द्वीप से वह इस रक़म से कोई माल ख़रीदकर ला दे। उसके जरिये तुम भी व्यापार कर सकते हो।"

माँ के जोर देने पर सोमनाथ ऊँघते-ऊँघते उठ बैठा। जंभाई ली। अपनी माता के हाथ से पाँच सिक्के ले लिये। उनींद आँखों से चलते चलते हीरालाल के घर पहुँचा। पाँच चांदी के सिक्के उसके

हाथ देकर अपनी माँ की कही बातें वहाँ पर दुहराई।

सोमनाथ को देखने पर हीरालाल को उस पर दया आ गई। उस छोटी सी पूंजी से सोमनाथ आखिर व्यापार क्या करेगा? वह सुधरेगा भी कैसे? यह बात जानकर भी स्वभाव से दयालू होने की वजह से हीरालाल बोला–"बेटा, ऐसा ही करूँगा।" ये बातें सुन सोमनाथ खुश हुआ, घर लौटकर फिर मजे में सो गया।

हीरालाल ने अपने साथी व्यापारियों के साथ जहाज तै करके माल भरवा दिया, एक अच्छे मुहुर्त का निर्णय कर अपने दल के साथ चल पड़ा। सौभाग्य से यात्रा में हवा उनके अनुकूल थी। जहाज जहाँ भी लंगर डालता, उन व्यापारियों के क्रय और विक्रय खूब चले। आखिर वह जहाज सुवर्ण द्वीप में पहुँचा। वहाँ पर व्यापारियों ने अपना सारा माल अच्छे दाम पर बेच डाला, बदले में चीनांबर, हाथी दांत की कारीगरी किये गये उपकरण, हीरे आदि अपनी शक्ति के मुताबिक़ सब ने खरीद लिये। इसके बाद जहाज़ वापस चल पड़ा।

दस दिन बीतने के बाद हीरालाल को अचानक सोमनाथ के दिये गये पाँच चांदी के सिक्कों की याद हो आई। अपने व्यापार के सिलसिले में वह उसकी बात बिलकुल भूल गया था। यदि उसके खरीदे गये माल में से कोई चीज़

सोमनाथ को देना चाहे तो ऐसी सस्ती कोई चीज़ उसके पास न थी।

हीरालाल ने अपने साथी व्यापारियों से कहा–"हम लोग जहाज को फिर से सुवर्ण द्वीप में वापस ले जायेंगे। मुझ से एक छोटी भूल हो गई है।" इन शब्दों के साथ उसने उन्हें असली बात बता दी। पर व्यापारियों ने हीरालाल की बात नहीं मानी। सब ने यही कहा–"चाहे तो हम सब पाँच-पाँच मोहर का चन्दा वसूल करके उस लड़के को दे देंगे, परंतु जहाज को वापस मत लौटा दो।"

थोड़े दिन गुजरने के बाद जहाज ने पूर्वी टापुओं में से एक बंदरगाह पर लंगर डाला। जहाज के पास कई भिखारी आये, उनमें से एक के पास तीन बंदर थे जिनमें दो बंदर बड़े ही चालाक थे। मालिक जो भी खेल खेलने को उन्हें आदेश देता, वह खेल खेल सकते थे। पर तीसरा बंदर बूढ़ा था। वह एक भी खेल नहीं जानता था। जब दोनों बंदर अपने खेल दिखा रहे थे, तब तीसरा उदास हो समुद्र की ओर देखते बैठा रहा।

उन बंदरों को देखते ही हीरालाल के मन में एक विचार आया। उसने सोचा कि सोमनाथ के दिये हुए सिक्कों स एक बंदर खरीद ले जाकर उसे दे तो उसकी जिम्मेदारी खतम हो जाएगी।

उसने मदारिये से पूछा–"सुनो भाई, मैं पाँच चांदी के सिक्के दूंगा। क्या तुम उन बंदरों में से एक मुझ दे सकते हो?"

"बाबूजी, इस बूढ़े बंदर को ले लो।" मदारिया बोला।

"जवान बंदर क्यों नहीं देते?" हीरालाल ने फिर पूछा।

"मैं इन्हें तो सौ सिक्कों में भी नहीं बेचूंगा। इन्हीं से मेरी रोटी चलती है। इस बूढ़े बंदर को मैंने पाँच सिक्कों में खरीद लिया है। इसे खाना तक देना बेकार है। कोई खेल-वाल नहीं जानता,

सिखाने पर भी नहीं सीखता, इसे ले लो, बाबूजी ।" मदारिया बोला ।

लाचार होकर हीरालाल ने बूढ़े बंदर को खरीद लिया, तब जहाज़ पर सवार हुआ । वह भी देखने में सोमनाथ जैसे भोला लगा । खाने के वक़्त छोड़ बाक़ी समयों में बंदर भी ऊँघा करता था ।

थोड़े दिन बाद जहाज मोतियों के द्वीप में पहुँचा । उस द्वीप के चारों तरफ़ समुद्र में मोती के सीप मिलते हैं । उस टापू में सिर्फ मछुआरे रहा करते थे । जब व्यापारी उस टापू में आ जाते हैं, तब वे लोग समुद्र में कूदकर मोती के सीप पकड़ लाते और उन्हें सस्ते में बेचा करते थे । व्यापारियों की क़िस्मत के अनुसार जब-तब मोती के सीपों में से बड़े-बड़े मोती निकल आते हैं ।

यह जहाज भी मोतियों के सीपों के वास्ते ही उस टापू में आया था । जहाज के बंदरगाह में लगते ही जवान लड़के चिल्लाते आ पहुँचे और समुद्र में कूद पड़े । तब तक ऊँघते बैठे रहनेवाला बंदर उन लड़कों की चिल्लाहटें सुनकर जहाज में से छलांग मारकर समुद्र में कूद पड़ा । हीरालाल यह सोचकर डर गया कि बेचारे सोमनाथ की क़स्मित में यह बंदर भी बदा नहीं है । लेकिन थोड़ी ही देर में वह बंदर दोनों हाथों में मोतियों के सीप भरकर छाती से लगाये तैरते किनारे आ पहुँचा । फिर जहाज पर चढ़कर सीपियों
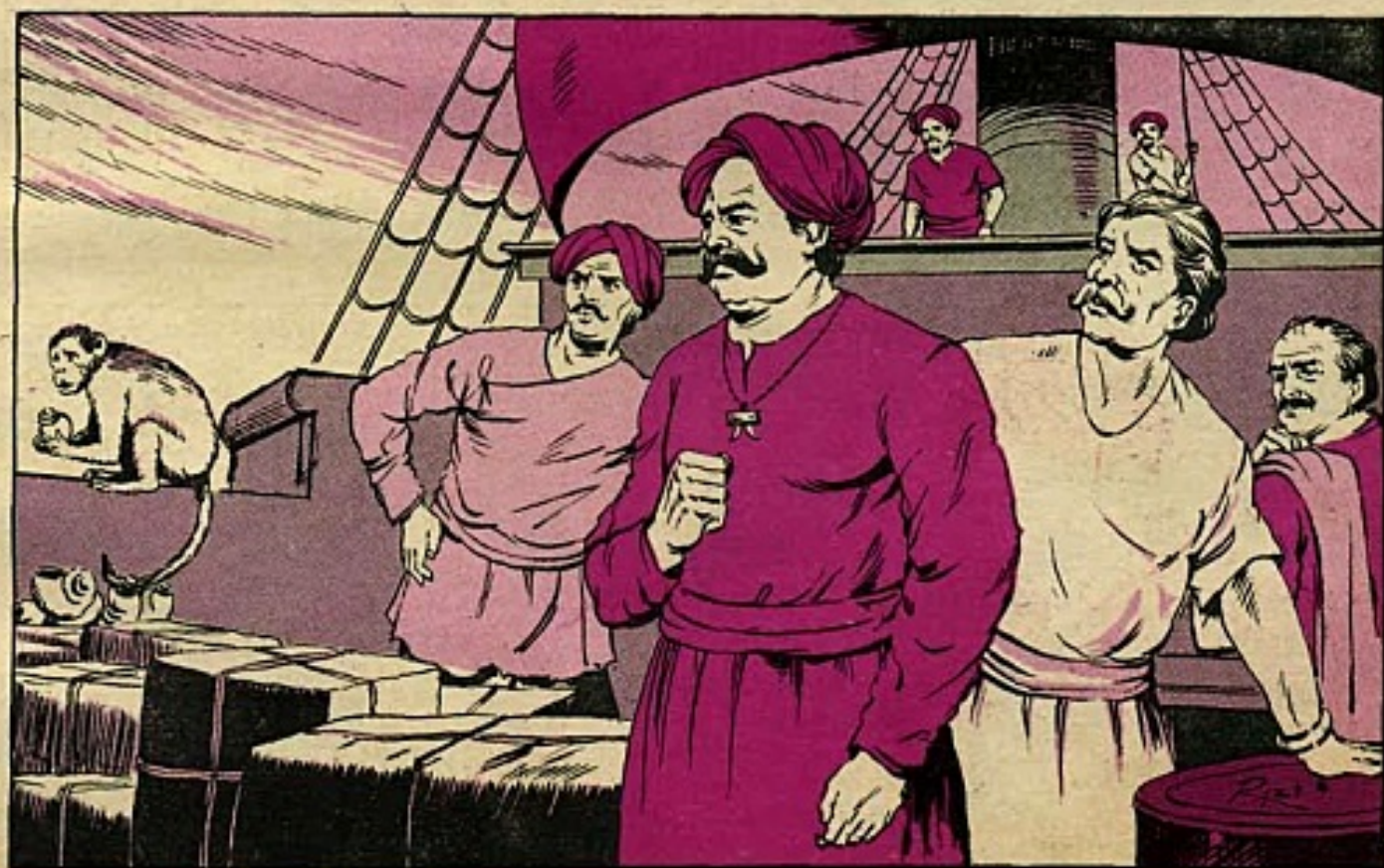
को एक जगह रखकर फिर समुद्र में कूद पड़ा। देखते-देखते उसने लगभग एक सौ मोती के सीप इकट्ठे किये।

बाक़ी व्यापारियों ने मोतियों के सीप खरीदे, परंतु किसी को भी दो-तीन से ज़्यादा मोती न मिले। वे भी बहुत छोटे थे। कुछ अभागों को एक भी मोती हाथ न लगा। मगर बंदर के लाये सीपियों में कई बड़े मोती और छोटे मोती भी काफ़ी मात्रा में थे।

इसके पीछे एक कारण था। वह बूढ़ा बंदर एक जमाने में इसी टापू में रहा करता था। इसका मालिक जो एक मछुआरा था, उसने इस बंदर को सीपी बटोरना सिखलाया था। कुछ दिनों बाद वह मर गया। इसके बाद जहाज़ के मल्लाह इसे पकड़ ले गये। उसे पाला। मगर हमेशा उसे ऊँघते देख उसे एक दूसरे टापू में एक मदारिये के हाथ सस्ते में बेच डाला। वही अब सोमनाथ का हो गया। उसने जल्दी ही सोमनाथ के वास्ते काफी मोती जमा किये, लेकिन मदारिया कई दिनों तक उसे अपने पास रखकर भी उसका मूल्य समझ न पाया।

हीरालाल ने सोमनाथ के मोतियों को सावधानी से छिपा रखा। अपने शहर में पहुँचते ही उन्हें सोमनाथ के हाथ सौंप दिया। व्यापारियों ने अपने दिये गये वचन के मुताबिक़ सोमनाथ को पांच-पांच सोने के मोहरे दे दिये।

उस धन से सोमनाथ ने एक अच्छा महल बनवाया। मोतियों के बेचने पर वह भी बड़ा धनी बन गया। जैसे मोतियों के टापू को देखते ही बंदर की खुमारी जाती रही, उसी तरह अपने हाथ में करने को काफी काम के आते ही सोमनाथ का आलसीपन जाता रहा। वह साल में एक बार जहाज़ पर अपने बंदर को लेकर मोतियों के द्वीप में चला जाता। मोती बटोरकर ले आता था। उसे काफी मात्रा में मोती मिल जाते थे। इस तरह सोमनाथ बड़ा धनी बन बैठा और विवाह करके कई साल सुखपूर्वक जिंदा रहा।

करनी का फल

दुर्गाप्रसाद एक महाजन था। उसके पास जो भी ब्याज पर कर्ज लेने पहुँच जाता, उसकी हैसियत के मुताबिक़ ब्याज का दर निर्णय करता था। एक बार जयराम नामक एक किसान ने आकर पूछा–"महाशय, मैं अपनी बेटी की शादी करना चाहता हूँ। शादी के खर्च के लिए दस हजार रुपयों की जरूरत होगी। मैं किश्तों में यह ऋण चुकाऊँगा।"

इतनी भारी रक़म उधार में देनेवाला उस गाँव में कोई दूसरा न था। इसलिए दुर्गाप्रसाद ने ब्याज का दर बढ़ाकर कहा।

"महाशय, मैं इतना ज्यादा ब्याज नहीं दे सकता। हमारे बाप-दादों के जमाने का वह बड़ा घर अब खाली पड़ा है, उसे बेच-बाचकर मैं अपनी बेटी की शादी कर दूँगा।" यों कहकर जयराम चला गया। दुर्गाप्रसाद को लगा कि हाथ में आई मछली फिसलकर चली गई। इसलिए उसने एक उपाय सोचा। वह यह कि जयराम के बाप-दादों का मकान भूतों का अड्डा है। इस तरह की अफ़वाह उड़ाने से कोई उसे खरीदने आगे न आएगा। यों विचार कर उसने ऐसी अफ़वाह फैलाई।

जयराम ने और कई जगह उधार लेने की कोशिश की, मगर कोई फ़ायदा न रहा। तब उसने अपने बाप-दादों का मकान बेचने का निर्णय किया। मगर लोग यह सोचकर कि वह मकान भूतों का अड्डा है, कोई खरीदने को तैयार न हुआ।

उन्हीं दिनों में दुर्गाप्रसाद का बचपन का दोस्त जो एक जमीन्दार था, उसका मेहमान बनकर आया। वह जयराम के पुरखों का वह मकान देख आश्चर्य में आ गया और दुर्गाप्रसाद से बोला–"ऐसे मकान तो आज के दिनों में कौन बनाते हैं? अगर

गोवर्द्धन दास

यह बिक्री के लिए हो तो मैं इसे एक लाख रुपयों में खरीद सकता हूँ।"

मगर दुर्गाप्रसाद ने अपने मित्र जमीन्दार से यह बात नहीं बताई कि जयराम का वह मकान बिक्री के लिए है। लेकिन जयराम के घर पहुँचा और बोला–"भाई साहब, तुमने कहा था कि अपना पुराना मकान बेचना चाहते हो! मैं दस हज़ार रुपये दूंगा, मेरे नाम वह मकान लिख दो।"

जयराम कोई मूर्ख नहीं था। उसने सोचा कि दुर्गाप्रसाद के द्वारा उस मकान के खरीदने के पीछे कोई बड़ी चाल होगी, उसने कहा–"मुझे तो उधार में दस हज़ार रुपये चाहिए, पर तुम से किसने बताया कि मेरे मकान का दाम दस हज़ार है? कम से कम वह मकान पचास हज़ार रुपये का होगा!"

दुर्गाप्रसाद ने सोचा, यदि उस मकान को पचास हज़ार में भी खरीद ले तो जमीन्दार के हाथ एक लाख रुपयों में बेचकर पचास हज़ार रुपयों का नफा उठाया जा सकता है। इसलिए दुर्गाप्रसाद ने बिना संकोच के जयराम के उस पुराने मकान को पचास हज़ार रुपयों में खरीद लिया।

वैसे जयराम के मुंह से पचास हज़ार रुपये की बात निकल गई, मगर उसने सपने में भी कभी न सोचा था कि उसका पुराना मकान बीस हज़ार में भी बिक सकता है। फिर क्या था, वह मकान बेचकर जयराम ने अपनी बेटी का विवाह ठाठ से मनाया और थोड़ा-बहुत खेत भी खरीद लिया।

थोड़े दिन बीतने के बाद दुर्गाप्रसाद ने अपने मित्र जमीन्दार के यहाँ खबर भेज दी कि वह पुराना मकान लाख रुपयों में बिक्री के लिए तैयार है।

उसके जवाब में जमीन्दार ने कहला भेजा–"मैंने फिलहाल उस मकान को खरीदने का विचार छोड़ दिया है। सब लोग बताते हैं कि वह भूतों का अड्डा है।" तब जाकर दुर्गाप्रसाद को लगा कि उसने जो गड्ढा खोदा, उसी में वह गिर गया है।

एक बार नारद भूलोक का संचार करते महर्षि व्यास के आश्रम में आये। व्यास महर्षि ने आदरपूर्वक उन्हें अर्घ्य और पाद्य देकर बिठाया, तब पूछा–"महात्मा, क्या इस विश्व में सुख नामक कोई चीज़ ही नहीं है?" फिर उन्होंने अपने अनुभव सुनाये। व्यास को जन्म के साथ ही उनकी माता ने त्याग दिया था। उन्होंने तपस्या करते एक पुत्र को प्राप्त किया। शिवजी की कृपा से प्राप्त वह पुत्र भी व्यास महर्षि को दुख में छोड़ वहाँ से कहीं चला गया। इस तरह अगली व पिछली पीढ़ियों के द्वारा तिरस्कृत व्यास महर्षि को फिर से सांसारिक बंधनों में फंसने की आवश्यकता पड़ी। उनकी माता सत्यवती ने राजा शंतनु के साथ विवाह करके पुत्रों का जन्म दिया, फिर अपने पति तथा बाद को अपने पुत्रों को भी खो बैठी। उनके आदेश से व्यास महर्षि ने उनकी बहुओं के द्वारा अंधे धृतराष्ट्र, अस्वस्थ पांडु राजा तथा दासी पुत्र विदुर का जन्म दिया। यों उसने तीन पुत्रों का तो जन्म दिया, पर उनमें से एक भी व्यास महर्षि को पिंड दान करने योग्य न रहे।

इसके बाद व्यास महर्षि की संतान धृतराष्ट्र और पांडु ने एक दूसरी पीढ़ी का जन्म दिया। उनके झगड़ों में व्यास मुनि को दखल देना पड़ा। राजा पांडु के पुत्र पांडवों को वनवास के कष्ट झेलने पड़े। इस प्रकार व्यास महर्षि सुख-दुखों के बीच

कैसे दबे रहें, सारा किस्सा सुनाकर नारद महर्षि से पूछा—"महात्मा, पुत्र, पिता तथा पोते नामक भ्रांति से मुक्ति कैसे मिल सकती है? संसार के बंधनों में फंसे हुए व्यक्ति के मन को सुख कैसे प्राप्त होगा?"

इस पर नारद ने यों समझाया—"वत्स, सांसारिक मायाजाल में फंसकर मोह से दूर रहनेवाला प्राणी कहीं रह सकता है? हरि, हर, ब्रह्मा आदि भी मोह में फंसकर मुझे महान ज्ञानी मानकर मेरी प्रशंसा करते हैं। मगर यह बात सत्य नहीं है। सुनिये, मैं भी मोह में फंसकर पत्नी के वास्ते कैसी यातनाएँ झेल चुका हूँ, बता देता हूँ।" इन शब्दों के साथ नारद ने अपना वृत्तांत व्यास महर्षि को यों सुनाया: एक दिन नारद और पर्वत ने पृथ्वी का भ्रमण करते पुण्य तीर्थों तथा ऋषियों के आश्रम देखते स्वयं एक नियम बनाया। वह यह था कि एक के विचारों को दूसरे के यहाँ न छिपाकर स्पष्ट बताना होगा।

वे दोनों देशाटन कर रहे थे। इस बीच ग्रीष्म ऋतु समाप्त हो गई और चातुर्मास्यम् (वर्षाकाल) आ पहुँचा। चातुर्मास्य बिता देने के लिए उन्हें किसी एक स्थान पर रहना पड़ेगा। इस वास्ते उन्हें संजय नामक एक राजा का नगर प्राप्त हुआ। दोनों ने राजमहल को ही अपना निवास बनाया, वर्षाकाल के वे चार मास भ्रमण के योग्य नहीं होते। राजमहल में वे सुखपूर्वक अपने दिन बिताते रहे। राजा की पुत्री मदयंती स्वयं उनकी परिचर्या करने लगी। उनके खाने, स्नान करने व सोने के लिए भी अच्छा इंतजाम किया। उनका समय वेदों के अध्ययन और संगीत तथा अन्य मनोरंजन के कार्य-क्रमों के बीच सुखपूर्वक कटने लगा।

धीरे धीरे नारद के वीणा-वादन तथा सामगान ने मदयंती के मन को अत्यंत आकृष्ट किया। प्रेमपूर्वक मदयंती जो कार्य करती थी, उन कार्यों ने नारद को अपनी ओर प्रबल रूप से आकृष्ट किया। उस

समय से वह सहज ही उन मुनियों के बीच सुविधाएँ करने में मदयंती नारद के प्रति विशेष पक्षपात दिखाने लगी। स्नान के वक़्त नारद के वास्ते गरम पानी तथा पर्वत को ठण्डे पानी का प्रबंध करती। खाने के वक़्त नारद को दही परोसती तो पर्वत को सिर्फ़ मट्ठा मिलता। बिस्तर भी दोनों के समान रूप से नहीं लगते। नारद की ओर मदयंती जो दृष्टि डालती, उसके संबंध में तो कुछ कहने की ज़रूरत है ही नहीं।

दोनों की परिचर्या के बीच स्पष्ट अंतर देख पर्वत ने एकांत में नारद से पूछा—"बंधु, राजकुमारी का व्यवहार और चाल-ढाल देखने पर लगता है कि उसने तुम्हें वरण किया है। यह भी प्रतीत होता है कि तुम भी उस पर मोहित हो। क्या तुम यह नियम भूल गये हो कि हम दोनों के बीच किसी भी रहस्य को गुप्त नहीं रखना चाहिए। सच बताओ!"

इस पर नारद ने लजाते हुए कहा—"हे मुनिवर, इसमें छिपाने को है ही क्या? राजकुमारी मुझसे प्यार करती है और मैं भी उसके साथ प्यार करता हूँ।"

यह बात सुनते ही पर्वत को क्रोध आया, उसने नारद को शाप दिया—"तुमने नियम का उल्लंघन करके मुझे धोखा दिया है, इसलिए तुम्हें बंदर का चेहरा प्राप्त हो जाए।"

नारद ने भी कोपोद्रेक में आकर पर्वत को उल्टा शाप दे दिया—"तुमने मेरे इस छोटे अपराध के वास्ते मुझे शाप दे दिया, इसलिए तुम्हें कभी भी स्वर्ग की प्राप्ति न हो! आइंदा तुम पृथ्वी लोक में ही रह जाओ।"

इस प्रकार पर्वत शपित होकर वहाँ से भूलोक में चला गया। नारद को बंदर का चेहरा प्राप्त हुआ। फिर भी राजकुमारी बड़े आदर के साथ उनकी सेवा करती रही। लेकिन अपने भानजे पर्वत के चले जाने पर नारद बड़े दुखी हुए।

इस बीच राजा संजय ने अपनी पुत्री के स्वयंवर का निर्णय किया और अपने मंत्री को आदेश दिया–"मैं अपनी पुत्री का विवाह करना चाहता हूँ। उसकी सुंदरता के योग्य रूप, गुण और उत्तम वंशवाले वर की खोज करो।"

"महाराज, आप की इच्छा के अनुरूप गुणवाले कई वर हैं, उनमें से आप को सब से अधिक जो पसंद आएगा, उसी को आप चुन लीजिए।" मंत्री ने उत्तर दिया।

अपने विवाह की तैयारियाँ होते जानकर मदयंती ने अपनी दासी के द्वारा राजा के पास संदेशा भेजते हुए यह बात स्पष्ट कर दी कि उसने पहले ही नारद को वर लिया है। अतः उसके विवाह के अन्य प्रयत्न करने की बिलकुल जरूरत नहीं है।

दासी ने जब राजा संजय को राजकुमारी का यह संदेशा सुनाया, उस वक़्त रानी कैकेई वहीं पर थीं। राजा ने रानी की ओर सार्थक दृष्टि दौड़ाकर कहा–"राजकुमारी ने उस बंदर के चेहरेवाले को कैसे वर लिया है? वह राजकुमारी के योग्य कैसे हो सकता है? उसके साथ हमारी पुत्री का विवाह कैसे करे? मूर्खतावश अगर हमारी पुत्री ने गलत निर्णय किया तो उसे सुधारना हमारा कर्तव्य है न? तुम राजकुमारी को बतला दो कि नारद तो एक दम भिखारी है।"

कैकेई ने एकांत में अपनी पुत्री को अनेक प्रकार से समझाया–"बेटी, तुम तो कोमल शरीरवाली हो! नारद सदा अपने बदन पर भस्म मलकर अपना शारीरिक सौंदर्य खो बैठा है। तुम्हारा चेहरा कैसा सुंदर है। उसका चेहरा तो बंदर का है। तुमने उसे कैसे वर लिया है? अलावा इसके वह हमेशा भ्रमण करते भीख माँगता रहता है। ऐसे भिखारी को तुमने कैसे वर लिया है? तुम्हारी इस मूर्खता पर तुम्हारे पिता बहुत ही दुखी हैं। कोई भी कोमल पान के पत्तों को ले जाकर ऊँट को

चराएगा? तुम्हारा विवाह अगर नारद के साथ करे तो लोग हमारी मूर्खता पर हँसेंगे नहीं?"

लेकिन संगीत के प्रति मोह रखनेवाली मदयंती ने अपने मन को विचलित होने नहीं दिया, वह बोली–"माँ, कोई भी युवक सुंदर होकर भी अगर मूर्ख हो, राज्य तथा धन भी रखते हो, तो फ़ायदा ही क्या है? नारद जैसे संगीत प्रवीण व्यक्ति के लिए राज्य, धन, सौंदर्य और चेहरे से क्या मतलब? उनके संगीत पर हिरण भी परवश हो जाते हैं। उनके जैसे गायक इन तीनों लोकों में नहीं हैं। जो रसज्ञ नहीं होते, ऐसे लोगों के साथ विवाह करने पर हर क्षण मौत का अनुभव करना होगा। पर रसज्ञ व्यक्ति की पत्नी बन जाने पर सारा जीवन आनंदमय ही होता है। स्वर का ज्ञान रखनेवाला साधारण मानव भी क्यों हो, वह देवताओं के समान होता है। पशुओं को भी आनंद के सागर में तैरानेवाले संगीत के प्रति अगर बुजुर्ग अनादर दिखाते हैं तो उनके जन्म को क्या बतावे? नारद की शक्ति से पिताजी बिलकुल अपरिचित हैं। शाप के द्वारा उन्हें वानर मुख प्राप्त होने के पूर्व ही मैंने उनके साथ प्यार किया है। वानर मुख उन्हें भले ही प्राप्त हो, वे मेरे प्रियतम ही हैं। किन्नरों के मुख तो अश्व मुख होते हैं। इस कारण क्या उनके संगीत का आदर न करनेवाले भी कोई होते हैं? विद्या न हो तो चेहरे को लेकर क्या करना है? मैं नारद को छोड़ साक्षात कामदेव भी मेरे सामने आवे तो उनके साथ विवाह न करूँगी। इसलिए मेरा विवाह नारदजी के साथ ही करा दो। पिताजी को तुम मनवा लो।"

इसके बाद कैकेई अपने पति के पास पहुँची और उन्हें अपनी पुत्री का निर्णय सुनाया। राजा ने इस बार कोई आपत्ति न उठाई और नारद के साथ मदयंती का विवाह किया।

इस पर नारद ने भी पर्वत से कहा– "मैंने भी दुर्बुद्धि से प्रेरित होकर तुम्हें शाप दिया। तुम यथा प्रकार स्वर्ग में चले जाओ।"

पर्वत प्रसन्न हो वहाँ से चले गये।

नारद के मुख मण्डल के परिवर्तन पर मदयंती बहुत ही प्रसन्न हो उठी और यह समाचार अपनी माता को सुनाया। उसने राजा को यह खबर दी। राजा भी प्रसन्न हो उठे।

इस प्रकार नारद ने यह अनुभवपूर्वक जाना कि संसार में माया के कारण कैसे कष्ट झेलने पड़ते हैं। उन्होंने व्यास महर्षि को अपना एक दूसरा अनुभव भी सुनाया :

नारद अपने ससुर के घर पर ही रह गये। जब भी उनकी पत्नी उनके पास आती, तब वह अपने वानर मुख का स्मरण कर बड़े दुखी हो जाते। किंतु मदयंती इस मामले में जरा भी दुखी न होती थी।

थोड़े दिन बीत गये। इस बीच पर्वत कई स्थानों पर गये। आखिर नारद को देखने आये। अपने फूफे के चेहरे को देखने पर उन्हें दया आ गई। उन्होंने अपने शाप को वापस लेते हुए कहा–"मैं राजकुमारी के वास्ते अपना शाप वापस लेता हूँ। आप का चेहरा यथा प्रकार हो जाये।"

एक बार नारद श्वेत द्वीप में श्री महा विष्णु को देखने पहुँचे। उस वक़्त लक्ष्मी देवी नारद मुनि को देखते ही झट से भीतर चली गई। इस पर नारद थोड़ा दुखी हुए, विष्णुजी से बोले–"क्या मैं वेश्यागामी हूँ, या दुष्ट हूँ? मैं तो तपस्वी हूँ। इंद्रियों पर विजय प्राप्त कर चुका हूँ। ऐसी हालत में आप की श्रीमतीजी मुझे देखते ही घर के भीतर चली गई हैं न? क्या यह भद्रतापूर्ण व्यवहार है?"

नारद के इस आक्षेप पर विष्णु ने क्रोध में आकर कहा–"नारी का यह धर्म है कि

पति को छोड़ वह अन्य पुरुषों के सान्निध्य में न रहे। बड़े से बड़े लोग भी इंद्रियों के अतीत नहीं हो सकते। महात्माओं के लिए भी यह संभव नहीं है। हम त्रिमूर्ति भी माया के सामने पराजित हुए हैं।"

तब नारद ने विस्मय में आकर पूछा—"भगवन, माया कैसी होती है? उसकी शक्ति क्या है?"

"मेरे साथ चलोगे तो मैं तुम्हें माया के दर्शन कराऊँगा। उसे देख तुम दुखी मत होओ।" यों समझाकर विष्णु ने गरुड़ को पुकारा। इसके बाद नारद और विष्णु गरुड़ पर सवार हो कहीं चले गये।

कन्याकुब्ज नामक नगर के समीप में एक सुंदर तालाब है। उसमें सुंदर कमल और कुमुद हैं। उसका पानी निर्मल है।

विष्णु नारद की कनगुरिया पकड़कर तालाब के पास ले आये और बोले—"इस तालाब में स्नान करके हम कन्याकुब्ज नगर में जायेंगे।"

नारद बीणा और हिरण का चर्म एक स्थान पर रखकर तालाब में उतर पड़े। दूसरे ही क्षण उनका पुरुष रूप जाता रहा और उन्हें स्त्री का रूप प्राप्त हुआ। यह बात नारद नहीं जानता था। पर विष्णु नारद की वीणा और हिरण का चर्म लेकर गरुड़ पर सवार हो चले गये।

नारद जब नारी के रूप में तालाब से बाहर आये, तब उन्हें अपनी बीणा और यहाँ तक श्री महाविष्णु की याद न आई। इतने में रथ पर तालध्वज नामक राजा अपने हाथी, घोड़े और सैनिकों के साथ वहाँ पर आये, उन्होंने नारद की ओर वासना भरी दृष्टि से देखा और पूछा—"तुम नदी सुंदरी हो, देवकन्या हो या नाग कन्या? यहाँ पर अकेली क्यों रहती हो?" साथ ही यह भी बताया कि वे उसके साथ प्रणय-विवाह करना चाहते हैं। नारी रूप में स्थित नारद ने राजा के प्रस्ताव को मान लिया। इसके बाद वे दोनों नगर में पहुँचे, वहाँ पर उनका विवाह हुआ।

नारद के भीतर पुरुष भाव अथवा ब्रह्मज्ञान थोड़ा भी बच न रहा। साथ ही उसके भीतर यह अहंकार पैदा हुआ कि उसकी समता कर सकनेवाली कोई सुंदर नारी कहीं नहीं है। नारद ने नारी के रूप में तालध्वज के साथ बारह वर्ष तक गृहस्थी चलाई। तब जाकर उसने गर्भ धारण किया। फिर उसके एक पुत्र पैदा हुआ। उसका नाम बीरवर्मा रखा गया। फिर क्या था, लगातार उसे पुत्र पैदा होने लगे। नारद ने उस नारी के रूप में बारह पुत्र पैदा किये। वे सब कालक्रम में बड़े हुए। विवाह करके बच्चे भी पैदा किये। इस प्रकार उनके वंश का विस्तार हुआ।

थोड़े समय बाद कन्याकुब्ज नगर पर शत्रु ने हमला किया। उस युद्ध में नारद के पुत्र और उनके भी पुत्र मर गये। इस पर नारद को पुत्र शोक प्राप्त हुआ।

उस वक़्त विष्णु एक बृद्ध ब्राह्मण के रूप में आये, बोले–"तुम कौन हो? तुम्हारे पुत्र कौन हैं? काल के प्रभाव में सारे कार्य घटित हो जाते हैं। तुम पहले स्नान करके तर्पण करो।"

इसके बाद विष्णु ने नारद को पुरुष तीर्थ नामक सरोवर के पास ले जाकर उसमें स्नान करने को कहा। उस सरोवर में डुबकी लगाते ही नारद का नारी रूप जाता रहा और उन्हें पुरुष रूप प्राप्त हुआ। उसी समय सरोवर के किनारे नारद की वीणा और हिरण के चर्म के साथ विष्णु ने दर्शन देकर कहा–"नारद, तुमने बड़ी देर लगाई, चलो।"

नारद सरोवर के बाहर आने पर नारी के रूप में अपने जीवन को बिलकुल भूल गये। मगर कालध्वज इस बात पर दुखी हो उठे कि उनकी पत्नी पुरुष बन गई है। विष्णु ने उस राजा को तत्वोपदेश देकर भेज दिया।

तब जाकर नारद को ज्ञात हो गया कि मानव माया के अधीन कैसे एक खिलौना बन जाता है।

सौतों की लड़ाई

मोतीलाल नामक व्यापारी के दो पत्नियाँ थीं। दोनों हर छोटी सी बात को लेकर झगड़ा किया करती थीं। इससे तंग आकर मोतीलाल ने अपने एक मित्र की सलाह मांगी। उसने एक उपाय बताया।

एक दिन मोतीलाल ने अपनी पत्नियों को बताया कि वह किसी गाँव में जा रहा है। घर से निकलकर एक सराय में पहुँचा, कोई डरावना वेश बनाकर चोर की भांति अपने घर आया और दर्वाजे पर दस्तक दी। उसकी पत्नियाँ खिड़कियों से झांककर चीख़ उठीं।

"मुझे डर लगता है, दीदी! ये शब्द कहते छोटी पत्नी ने अपनी सौत से गले लगाया।

"पगली, डरती क्यों हो?" यों समझाकर बड़ी पत्नी ने छोटी पत्नी को समझाया।

"किवाड़ खोलोगी या दर्वाजा तोड़ दूं?" मोतीलाल ने कर्कश स्वर में पूछा।

दोनों सौतों ने आपस में मशविरा करके दो मूसल अपने हाथों में लिये, हिम्मत के साथ पूछा–"अबे, कौन हो तुम? सामने तो आ जाओ!" इस पर मोतीलाल वहाँ से भागते हुए सौ रुपयों से भरी रुपयों की एक थैली वहाँ पर खिसकाकर चला गया। मिल-जुलकर रहने से फ़ायदा होता है, यह सबक़ सिखाने के लिए मोतीलाल ने ऐसा किया था।

लेकिन दूसरे दिन उसने घर लौटकर देखा, दोनों फिर से झगड़ रही थीं–"अरी, वह चोर मुझको देख भाग गया है, इसलिए ये रुपये मेरे हैं।" मोतीलाल अवाक् रह गया।
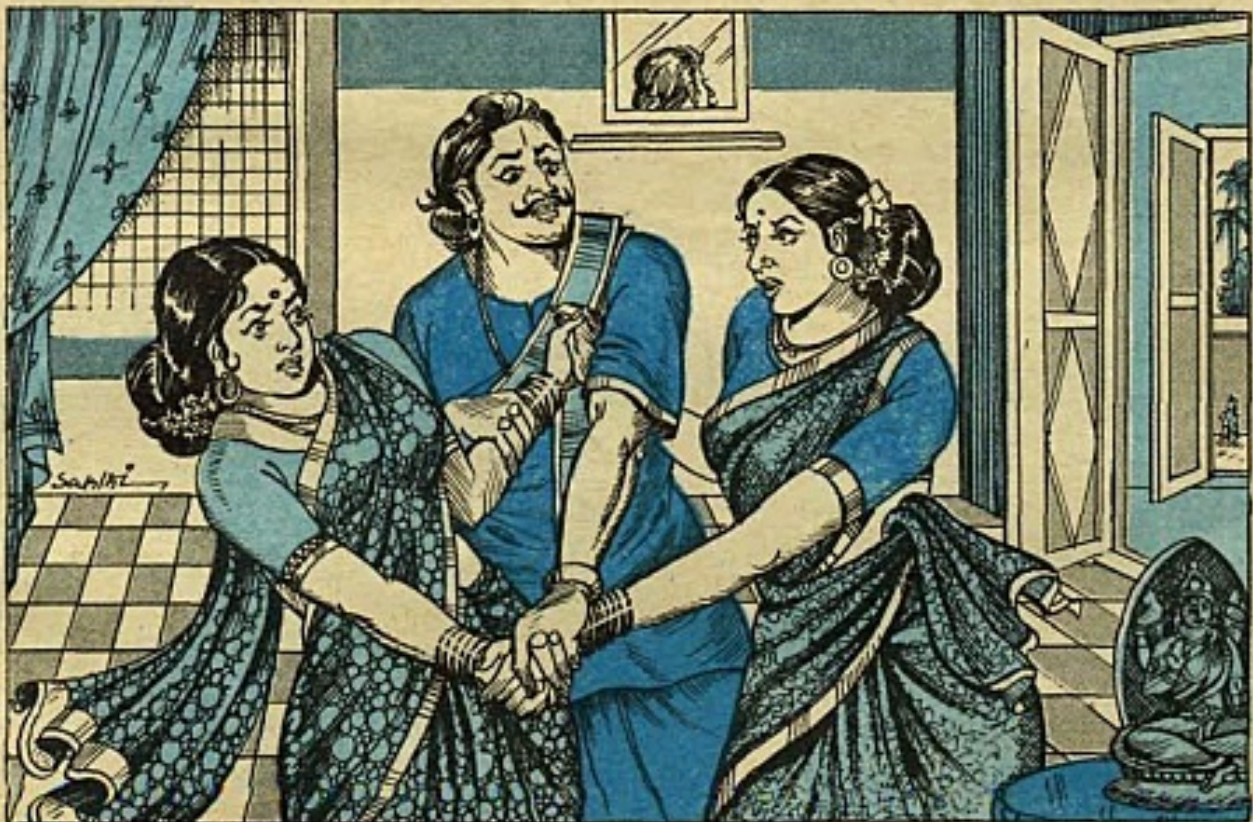
डरानेवाले पिशाच

धर्मवरम गाँव से थोड़ी दूर पर एक उजड़ा हुआ मकान था। उसके सामने बड़े बड़े बरगद थे। मुसाफ़िर दिन के वक़्त उनकी छाया में आराम करते थे, लेकिन अंधेरा फैलने के बाद कोई भी उस ओर जाने की हिम्मत नहीं करते थे। लोगों में यह अफ़वाह फैली थी कि उस उजड़े मकान में कामिनी पिशाच बसती हैं! इसके प्रमाण स्वरूप संध्या के बाद धर्मवरम जानेवाले मुसाफ़िरों को उस मकान में पायलों और चूड़ियों की खनखनाहटें सुनाई देती थीं।

धर्मवरम के तीन युवकों ने उन पिशाचों का पता लगाना चाहा। वे तीनों एक दिन रात को उस उजड़े मकान में पहुँचे और मार खाकर जान बचाकर भाग आये।

धर्मवरम की कामिनी पिशाचों की खबर शहर में भी फैल गई। शहर से परमेश नामक एक युवक आया। संध्या के बाद एक बरगद पर चढ़ गया। उसने सारी रात उसी पेड़ पर बिताई। रात के वक़्त उसने जब तब उस उजड़े मकान के भीतर से चूड़ियों की खनखनाहट तथा पायलों की रुनझुन की आवाज़ सुनी, दूसरे दिन सवेरे वह शहर को लौट गया।

दस दिन बाद धर्मवरम गाँव में पुतली खेल का एक दल आ पहुँचा। उस दल में औरतें और मर्द कुल मिलाकर दस लोग थे। उस दल ने गाँव के बुज़ुर्गों से मिलकर अपना विचार बताया कि वे गाँव के बाहर बरगदों के नीचे अपने पुतली खेल का प्रदर्शन करना चाहते हैं। कुछ बुज़ुर्गों ने यह कहकर आपत्ति उठाई कि वहाँ पर कामिनी पिशाच हैं। पर पुतली खेल के दल के लोगों ने उन्हें समझाया– "हमारी पुतलियों में वीर हनुमान की

गोविंद वर्मा

पुतली भी है। जब तक हनुमानजी पर्दे पर दिखाई देंगे तब तक शाकिनी, ढाकिनी आदि भूतों और प्रेतगणों का कोई डर न होगा। उनके खेल चलने के नहीं।"

फिर भी कुछ बुजुर्गों ने पुतली खेल के दल के निर्णय पर बड़ी आपत्ति उठाई।

इस पर उस दल के नेता ने अपना दृढ़ निर्णय सुनाया—"आप के गाँव के लोगों में से चाहे हमारे खेल देखने के लिए कोई आवे या न आवे, हम अपने खेल का प्रदर्शन वहीं पर करेंगे।"

पुतली खेल के दल ने शाम को बरगदों के नीचे अपने प्रदर्शन के लिए आवश्यक सारे प्रबंध किये। थोड़ी रात के बीतने पर अपना खेल शुरू किया। कुछ हिम्मतवर लोग उस प्रदर्शन को देखने आये।

खेल के शुरू होते ही कहीं से हड्डियाँ आकर गिर गईं। प्रेक्षकों में से कुछ लोग डर के मारे भाग गये। इस पर बाक़ी प्रेक्षक भी वहाँ से भाग खड़े हुए।

अब लाचार होकर उस दल ने हनुमानजी को पर्दे पर ला खड़ा किया। फिर भी हड्डियाँ आकर मंच पर गिरती रहीं। तब उस दल ने सोचा—"ये पिशाच तो डरानेवाली हैं, डरनेवाली नहीं हैं।"

इतने में उस दल को उस उजड़े मकान के भीतर से चूड़ियों तथा पायलों की

ध्वनि सुनाई दी। थोड़ी देर बाद उस मकान के भीतर से पाँच-छे दृढ़काय व्यक्तियों ने निकलकर उस दल को घेर लिया।

उनमें एक ने ललकार कर कहा—"तुम्हारा हनुमान कामिनी पिशाचों की खबर लेते हैं तो हम तुम लोगों की ख़बर लेंगे।" वे लोग यों धमकी दे ही रहे थे, तब पुतली खेल के दल के नर-नारियों ने अचानक हमला करके उन दृढ़काय व्यक्तियों के हाथों से लाठियाँ छीन लीं और उन पर लाठियों का प्रहार करने लगे। दृढ़काय व्यक्ति भी उस हठात् हमले के लिए तैयार न थे। वे भौंचक्के हो गये, पर

भाग नहीं पाये। पुतली खेल के दल ने उन्हें पकड़कर पेड़ों से बांध दिया। कुछ लोगों ने मशाल लेकर उजड़े मकान में प्रवेश किया। भीतर के एक कमरे में चूड़ियाँ और पायल दिखाई दिये।

पुतली खेल के दल ने जब उन दृढ़काय व्यक्तियों पर कोड़े बरसाये, तब उन लोगों ने असली बात बताई।

वास्तव में बात यह थी कि धर्मावरम गाँव के मल्ल नायक, जगतसिंह ठाकुर तथा सज्जन पंडित उस उजड़े मकान को इस प्रकार के अत्याचारों का केन्द्र बनाये हुए थे। वहाँ पर कई तरह के षड़यंत्र रचते थे। अपने अधिकार को न माननेवाले लोगों को दण्ड देने, चोरी का माल सस्ते में खरीदने तथा अन्य दुष्ट कार्यों के लिए उस उजड़े मकान का उपयोग करते थे। उन्हीं लोगों ने अपने इन रहस्यपूर्ण कार्यों को छिपाने के लिए कामिनी पिशाचों की सृष्टि की थी। जो दृढ़काय व्यक्ति पकड़े गये, वे उन्हीं दुष्टों के सेवक थे। वे ही लोग तनख्वाह देकर उन सेवकों से ये कार्य कराया करते थे।

जैसे कामिनी पिशाचों की बात झूठ है, वैसे पुतली खेल का दल भी झूठ ही है। वे लोग वास्तव में पुलिस के सिपाही थे। परमेश उन्हीं के द्वारा भेजा गया व्यक्ति था। उसने जो रपट दी, उसके आधार पर गाँव के दुष्ट व्यक्तियों का धोखा प्रकट करने के लिए पुतली खेल के दल के बहाने उस गाँव में आये थे।

उस दिन रात को गाँव के बुजुर्गों के घरों की तलाशी ली गई। उनके घरों में कई ऐसी चीजें बरामद हुईं जिन्हें रखना कानून की दृष्टि से अपराध है। सवेरा होते ही गाँव के उन दुष्ट बुजुर्गों तथा उनके सेवकों को सिपाही थाने में ले गये।

धर्मवरम गाँव के लोगों को जब मालूम हुआ कि आज तक वे लोग जिन्हें कामिनी पिशाच मान रहे थे, वे उसी गाँव के दुष्ट व्यक्ति हैं, तब उनके आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा।

बुद्धिमान भाई

देवगिरि में तीन भाई थे। वे तीनों कोई भी काम तीन प्रकार से किया करते थे। यह ख़बर जब कांचीपुर के राजा को मिली, तब राजा ने यह निश्चय किया कि तीनों को राजदरबार में बुलवाकर उनकी परीक्षा करके हराना चाहिए। यों विचार करके उनके पास यह आदेश भेजा कि अमुक दिन अमुक समय तीनों जरूर हाज़िर हो ज़ावे! राजा का उद्देश्य था कि तीनों एक ही समय पर राजदरबार में पहुँचे तो यह साबित किया जा सकता है कि तीनों ने एक ही काम एक ही प्रकार से किया है।

तीनों भाई ठीक समय पर दरबार में पहुँचे, मगर तीनों को तीन द्वारों से ठीक समय पर दरबार में क़दम रखते देख राजा चकित रह गये। इसके बाद सिपाहियों ने तीनों को तीन गिलासों में पानी लाकर दे दिया। एक ने झट गटागट उसे पी लिया, दूसरे ने साधारण ढंग से पी लिया और तीसरे ने चुबलाते धीरे से पी लिया।

पानी पीने के बाद एक ने गिलास साधारण रूप में रखा, दूसरे ने आडे रखा और तीसरे ने औंधे मुँह रखा। इसके बाद सिपाही शरबत ले आये। जिस भाई ने गिलास साधारण ढंग से रखा था, उसने शरबत गिलास में डालने को कहा, औंधे मुँह रखनेवाले ने मना किया, आडे रखनेवाले ने कहा कि गिलास में शरबत भर दे तो पी लूँगा, वरना मुझे नहीं चाहिए।

राजा उन भाइयों की बुद्धिमत्ता पर प्रसन्न हुए। उन्हें हराना आसान काम न मानकर उनका सम्मान करके भेज दिया।
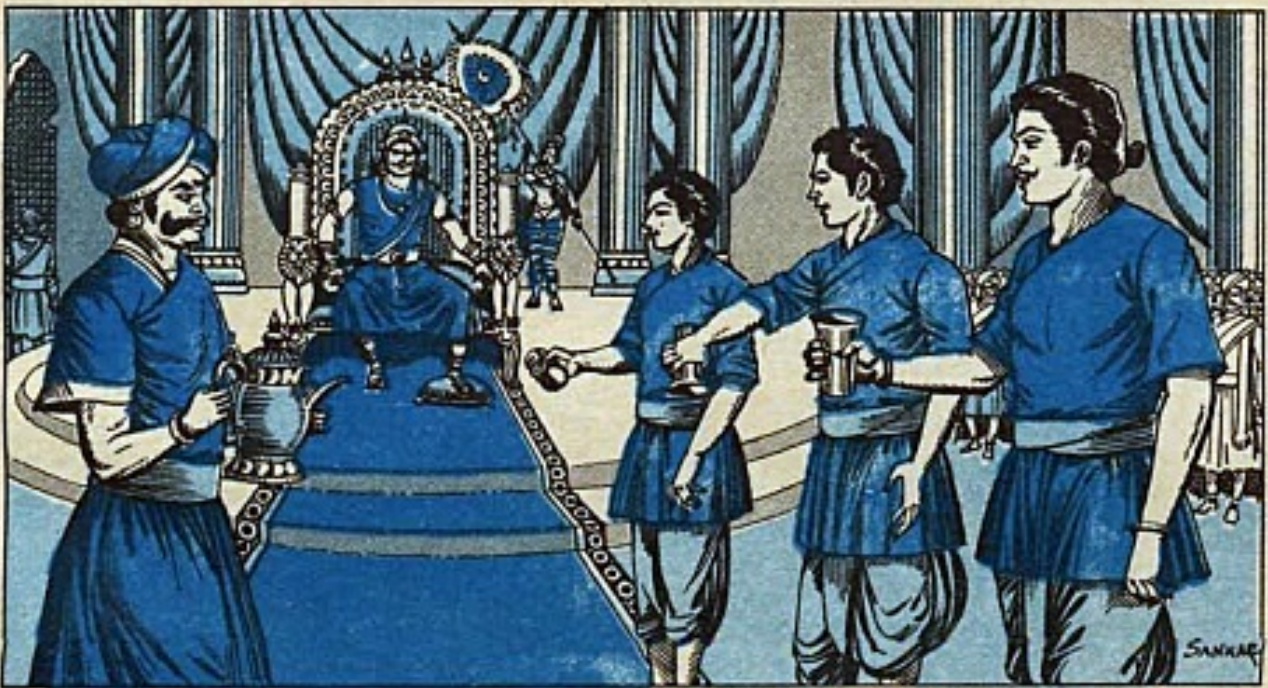
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अक्तूबर १९८० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Brahmdev

★

Brahmdev

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : नन्हा पंडित भोग लगाये!

द्वितीय फोटो : देवता का मन ललचाये!!

प्रेषक : सुशील 'अकेला' थाना चौक पो. खगड़िया-८५१२०४ (बिहार)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

* कार्बोक्सीलिक एसिड ग्रुप का फार्मूला,
जो दांतों के एनेमल को नष्ट करके,
दांतों में दर्दनाक खोखले बनाता है.

अधिक मजबूत दांत,
दंत-क्षय की रोकथाम — बिनाका फ्लोराइड.

अपनी आँखें बंद करो और जो चाहो माँगो
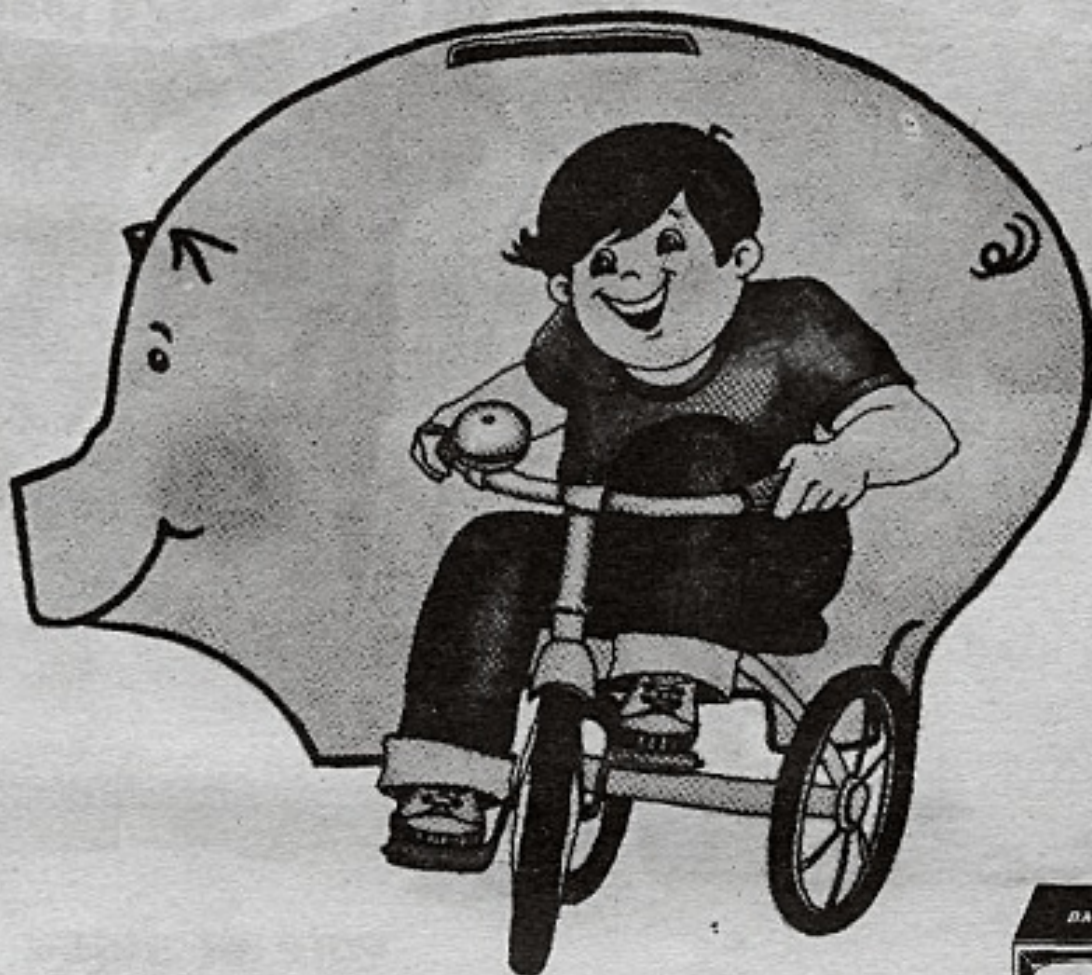
तुम जो चाहोगे, वो मिलेगा बशर्ते बचत करो. तुम खुद अपने पैसों से साइकिल, खिलौने या गुड़िया, जो चाहो खरीद सकते हो. केनरा बैंक की बालक्षेम जमा योजना तुम्हारे लिए ही है.

बालक्षेम के सुंदर से चाबीवाले गुल्लक में तुम पैसे जमा करते जाओ– भर जाने पर केनरा बैंक में जाकर अपने पैसे जमा करा दो. और फिर गुल्लक भरना शुरू कर दो. तुम्हारी रकम बढ़ती ही जायेगी क्योंकि हम उसमें पैसे मिलाते जायेंगे. जल्द ही इतनी रकम जमा हो जायेगी कि तुम मनचाही चीज़ें खरीद सकोगे.

अधिक जानकारी के लिए केनरा बैंक की अपनी नज़दीकी शाखा में चले आओ. हमारी अन्य विशेष योजनाएं हैं :
कामधेनु, विद्यानिधि और निरन्तर.

बालक्षेमा जमा योजना

BALAKSHEMA

CANARA BANK

केनरा बैंक

GROWING TO SERVE
CANARA BANK

(एक राष्ट्रीयकृत बैंक)

देशभर में 1,200 से भी अधिक शाखायें.

maa CB 4 Hin 80

CHANDAMAMA (Hindi) AUGUST 1980 Regd. No. M. 5452